पहला अंक

(दो घड़ी रात जा चुकी है। पूर्णिमा का चाँद क्षितिज के ऊपर की ओर उठ रहा है। पच्छिमी हवा के साथ बादल के उजले टुकड़े उड़ते हुए भागे जा रहे हैं और जब कभी वे चाँद के नीचे से होकर निकलते हैं, जान पड़ता है—जैसे चाँद दौड़ने लगा। चाँदनी रह-रह कर तेज़ और धीमी पड़ रही है। कोई छोटा, लेकिन घना छायादार पेड़। जिसकी डाल-पत्ती मिल कर प्रायः एक पूरा वृत्त बना रही हैं। पेड़ के सामने कुछ दूरी पर एक मकान, जिसके ऊपरका भाग तो चाँदनी में दीख पड़ता है, लेकिन नीचे का सारा

भाग पेड़ की छाया में छिप रहा है, इसलिए कि चाँद अभी पेड़ की आड़ में है। मकान और पेड़ के बीच की धरती पेड़ की छाया में छिप रही है, जिसके दोनों ओर चाँदनी है। मकान की छत पर कोई स्त्री सफ़ेद साड़ी पहने इधर-उधर घूम रही है और जब-तब रुक कर पेड़ और उसके इधर-उधर देखने लगती है।

बातें करते हुए प्रकाशचंद्र और राघवशरण का प्रवेश। राघवशरण पेड़ से कुछ आगे बढ़ कर धरती पर बैठ जाता है।)

प्रकाशचंद्र

(झुककर हाथ पकड़ते हुए) यहीं... ?

राघवशरण

(झुँझला कर) छोड़ो भी .....

प्रकाशचंद्र

(मीठे स्वर में) जी...(मकान की ओर हाथ उठा कर) चलें वहाँ और नहीं तो इसी चाँदनी में......यहाँ अँधेरे में......

राघवशरण

बैठो भी......नहीं तो तुम (आगे की ओर हाथ उठा कर) वहाँ चाँदनी में बैठो।

प्रकाशचंद्र

लेकिन अँधेरे में......

राघवशरण

मेरे लिए अँधेरा स्वाभाविक है। वह उसी तरह का है, जैसी मेरी आत्मा है। तुम साहित्यकार हो...कलाकार हो, कवि हो, लेखक हो। तुम्हारी आत्मा प्रकाशित है, तुम्हें चाँदनी चाहिए, फूल चाहिए। संसार में जितना सुंदर है, जितना सुख, सौंदर्य और आनंद का है, केवल तुम्हारे हिस्से का होना चाहिए। तुम वहाँ चाँदनी में बैठो। वह केवल तुम्हारे लिए है, केवल तुम्हारे लिए......

प्रकाशचंद्र

जी, शायद आप मुझे लिखने न देंगे ?

राघवशरण

मैं चाहता तो यही हूँ तुम न लिखो... हाँ न लिखो। तुम्हारा लिखना, जान बूझ कर वह जो बुरा है उसे सुंदर और आकर्षक बनाना, अपने मरण और नरक को अमरत्व और स्वर्ग समझना...तुम नहीं मानते, आज दिन जिसे हम

सभ्य कहते हैं...उस सभ्य संसार में जितनी बुराइयाँ फैली हैं...उनका कारण तुम्हारा साहित्य और तुम्हारी कला है। तुम्हारी ही नहीं, तुम्हारे साथी सभी कवियों, सभी उपन्यासकारों, सभी नाटककारों की। आज कल के उन सभी कलम चलाने वालों की, जिन्हें तुम लोग रचयिता कहते हो, निर्माता कहते हो, स्रष्टा—और यहाँ तक कि ईश्वर भी कह बैठते हो। लेकिन, सचाई...अजी सचाई तो बस यही है कि तुम सभी शराब के नशे में झूम रहे हो और अपने साथ ही दुनियाँ को झुमाना चाहते हो। अभी-अभी तुमने कला को योगमाया कह दिया। तुम्हारा दंभ कितना उग्र है। बैठो बैठो वहाँ.. वहाँ चाँदनी में बैठो। बैठते क्यों नहीं जी!

प्रकाशचंद्र

(उसके सामने चाँदनी में बैठ कर) जी, कहते चलें। कलाकार के सामने संसार का सुंदर और संमोहक रूप है, आपके सामने बीभत्स और भयानक। आप अपने विचारों में जीवित रहें, मुझे अपने विचारों में जीने दें। मैं कला को योगमाया

कहता हूँ...निर्माता की वह संमोहिका शक्ति, जिसमें संसार अपने को भूल जाता है—अपने सुख-दुख को, अपने संकट बंधन को। आत्मा अपनी स्वाभाविक दशा आनंद को प्राप्त होती है। कला की बुराई-भलाई पर विचार करना सूर्य और चंद्रमा, पृथ्वी और जल की बुराई भलाई पर विचार करना है। मुझे इस बात की तनिक भी लालसा नहीं है कि आप मेरा सम्मान करें। लेकिन, जब कभी मेरी कला आपकी आत्मा को अभिभूत करे.. ...

राघवशरण

(एकाएक उठकर) चुप भी रहो। तुम्हारी कला और तुम्हारी आत्मा का उन्माद और अवसाद मेरी आत्मा को अभिभूत करे..आत्मा इसके लिए नहीं है। इसके लिए नहीं है कि उसका विवेक और प्रकाश कम कर दिया जाय, उसे मोह और अंधकार में ढकेल दिया जाय। तुम लोगों ने उस पर इतना रंग चढ़ा दिया कि वह कुरूप हो गई। तुम ज़रा सी बात पर रोने और हँसने वाले, अपनी कामना और लालसा डालो, लेकिन आत्मा के दास,

कला के नाम पर चाहे जो कुछ कर डालो लेकिन आत्मा के नाम पर कुछ न करना। (विद्रूप-हँसी हँस कर) कुछ तो तुम लोग अपनी प्रेमिका के लिए लिखते हो, कुछ अपने लिए, कुछ अपने मित्रों और संबंधियों के लिए, संसार का सामूहिक रूप तुम्हारी कल्पना पर नहीं चढ़ता। क्यों, है ठीक या नहीं ?

प्रकाशचंद्र

संभव है, हो। मैं इतना सोच नहीं पाता और न मैं सोचना चाहता हूँ।

राघवशरण

क्यों ?

प्रकाशचंद्र

जी' ' मैं क्या करूँ ? लिखना तो मुझे होता है ! नहीं तो, मेरे भीतर जो बोझ बढ़ जाता है, उसी से दब कर मर जाऊँ।

राघवशरण

अपना बोझ दूसरों पर डाल देते हो ? लेकिन इसमें तो विश्व-कल्याण नहीं है। महादेव ने तो

संसार का विष पी लिया और तुम अपना विष नहीं पचा पाते।

प्रकाशचंद्र

(हँसते हुए) जी, तो मैं लिखता हूँ अपना विष! ऐं!

राघवशरण

तुम जिन चरित्रों का निर्माण करते हो, जिन भावों और विचारों पर उनकी रचना करते हो, सब तुम्हारे मन की; तुम्हारे पास जो नहीं है, जो तुम्हें चाहिए, जीवन में तो उसे पा नहीं सकते, कल्पना से अपनी उस कमी को पूरा करना चाहते हो। उँह, अपने को मार न डालो। तुम्हारा मरना तुम्हारा जीना होगा, और इस तरह का जीना तुम्हारा मरना है। शब्दों और भावों की आँधी तो तुम पैदा कर लेते हो, तुम्हारी इस शक्ति का मैं क़ायल हूँ—लेकिन··

प्रकाश चंद्र

लेकिन क्या ?

राघवशरण

यही कि जीवन···(कुछ सोचकर) जीवन

की अनुभूति तुम्हारे पास है कहाँ ? और वह तब तक नहीं हो सकती, जब तक कि तुम्हारा जीवन मिट नहीं जाता। अपनी सत्ता मिटा डालो। अपने को विश्व में लय हो जाने दो। तब तुम अपनी सिद्धि को पहुँच सकोगे। तुम्हारी समस्या तुम्हारे 'व्यक्ति' की नहीं, तुम्हारे विश्व की होनी चाहिए।

प्रकाशचंद्र

हूँ......तब......

राघवशरण

और यहाँ तुम्हारी समस्या तुम्हारी बेड़ी बन रही है। उसे काट डालो।

(उठकर अँधेरे में टहलने लगता है)

प्रकाशचंद्र

मेरी कोई अपनी समस्या तो...

राघवशरण

नहीं है ?

प्रकाशचंद्र

हाँ...

राघवशरण

है जी···

प्रकाशचंद्र

लेकिन···

राघवशरण

इस लेकिन से काम नहीं चलता! और अब मुझे फिर कभी यहाँ आना न होगा। शायद अबकी गया, फिर न आऊँ। लेकिन तुम्हें बंधन में छोड़ जाना भी···(उसके समीप जाकर) तुम अपना बंधन काट न डालो। अपनी समस्या छोड़ दो और फिर चाहे तुम अपने को रचयिता कहो या निर्माता। मैं सब मान लूँगा।

प्रकाशचंद्र

व्यक्ति की समस्या छूटेगी कैसे?

राघवशरण

फिर व्यक्ति रचियता होगा कैसे? व्यक्ति को अपनी समस्या छोड़नी होगी। तभी, वह विश्व-समस्या का अधिकारी होगा।

प्रकाशचंद्र

आप चाहते क्या हैं ?

राघवशरण

मैं… ?

प्रकाशचंद्र

जी।

राघवशरण

मैं चाहता हूँ तुम्हें स्वतंत्र करना।

प्रकाशचंद्र

अच्छा…।

राघवशरण

जानते हो यह लड़की कौन है ?

प्रकाशचंद्र

कौन ?

राघवशरण

यहाँ जो तुम्हारे साथ रहती है ? (प्रकाशचंद्र चुप होकर उसकी ओर देखने लगता है) यही तुम्हारी समस्या है। यह तुम्हारी अपनी समस्या है। संसार का इससे कोई सम्बन्ध नहीं। इससे छुट्टी ले लो। इसके बाद तुम जो कुछ भी लिखोगे, सुंदर होगा।

प्रकाशचंद्र

वह मेरे साथ पाँच वर्ष से है। उससे विवाह भी…

राघवशरण

तुम्हारा विवाह ?

प्रकाशचंद्र

हाँ…

राघवशरण

मूर्ख…कला का सबसे बड़ा शत्रु है विवाह। तुमने विवाह कर लिया…उससे…

प्रकाशचंद्र

उसमें कोई बुराई है ?

राघवशरण

उसमें बुराई होती तो कोई बात नहीं। किसमें बुराई नहीं है ? बुरा है उसका इतिहास…।

प्रकाशचंद्र

संभव है।

राघवशरण

इतनी उदासी के साथ ?

प्रकाशचंद्र

मैं उसे छोड़ नहीं सकता। मेरा रहना कैसे हो सकेगा अकेले? इस तरह कौन रह सकेगा?

राघवशरण

तुम, मैं; जिस किसी को अपने व्यक्तित्व से ऊपर उठकर विश्व में लय होना होगा।

प्रकाशचंद्र

मैं इस जीवट का कदाचित् नहीं हूँ। उसके हृदय में मुझे तो कोई विकार नहीं देख पड़ा।

राघवशरण

मैंने कहा तो, उसका इतिहास बुरा है। उसने जो कुछ पहले किया, अब भी कर सकती है। उसे अवसर मिलना चाहिए।

प्रकाशचंद्र

क्या हुआ उससे ऐसा.....?

राघवशरण

उसने एक ही साथ दो पुरुषों से प्रेम किया और अंत में दोनों के नाश का कारण बनी।

प्रकाशचंद्र

तब ...

राघवशरण

एक तो मारा गया, और दूसरे को कालेपानी की सज़ा हुई बीस वर्ष की।

प्रकाशचंद्र

दोनों ही मूर्ख थे, नहीं तो...

राघवशरण

ऐसा नहीं जी, दोनों बैरिस्टर थे। दोनों को शिक्षा विलायत में हुई थी। यह घटना सन् उन्नीस सौ की है। वह समय अंग्रेज़ी चमक-दमक का मध्याह्न था, जब यहाँ के विद्यार्थी कालेज से निकल कर विलायत जाने और वहाँ से लौटने पर करोड़पति बन जाने का सपना देखा करते थे। अंग्रेज़ी चमक-दमक का वह मोह तो अब न रहा। उन दिनों इस देश की आत्मा में लालसा का जो ज्वार उठा था, वह तो अब असंतोष में बदल गया है।

(एकाएक चुप होकर इधर-उधर टहलने लगता है। प्रकाशचंद्र अपनी जगह पर खड़ा होकर चाँद की ओर देखने

लगता है, जो अब पेड़ के ऊपर आ गया है। चाँदनी पूरे मकान पर पड़ रही है। वह स्त्री जो मकान की छत पर थी, वहाँ नहीं है। पेड़ के सामने मकान में तीन दरवाज़े हैं, जो बंद हैं। राघवशरण प्रकाशचंद्र के पास आकर खड़ा होता है और उसके मुँह की ओर ध्यान से देखने लगता है। दोनों के मुँह पर चाँदनी पड़ रही है। प्रकाशचंद्र की अवस्था प्रायः पच्चीस की है। उसकी दाढ़ी-मूँछ सब बनी हुई है। गोरा, लंबा, इकहरा शरीर। सिर के लंबे बाल घूम कर कंधे तक आ गए हैं। लम्बी पतली नाक और पतले ओठ, सब कुछ मिल कर, उसके चेहरे पर कोमलता का आभास पैदा कर रहे हैं। राघवशरण की अवस्था यों तो प्रकाशचंद्र से बहुत अधिक नहीं मालूम होती, किन्तु उसके सिर के आधे से अधिक बाल सफेद हो गए हैं। रंग साँवला है, शरीर के मांसल होने से गंठुमी हो रहा है। आँखें काली और दृष्टि तेज़ है।)

प्रकाशचंद्र

(उसकी ओर देख कर आग्रह के स्वर में) जी नहीं चाहता कुछ सुनने को। संदेह हो रहा है कहीं...(छाती पर हाथ रख कर) उद्वेग न पैदा हो जाय।

राघवशरण

इसी हृदय और आत्मा के बल पर तुम लेखक

को 'रचियता' और उसकी कला को 'योगमाया' कहते हो? उसका इतिहास तुम्हारे भीतर भय पैदा कर रहा है। चाहते तो हो उसके साथ रहना—किंतु उसके सत्य से इस प्रकार भाग रहे हो?

प्रकाशचंद्र

उसका सत्य तो उसके हृदय और उसकी आत्मा की चीज़ है। जब वह मेरी ओर देखती है, मेरे हाथ में जब उसका हाथ होता है, मेरे कंधे पर जब वह अपना सिर रख देती है, उसकी एक-एक साँस से निकल कर उसका सत्य आकाश में फैल जाता है और तब मैं अपने चारों ओर जिधर देखता हूँ, उसका सत्य देख पड़ता है।

राघवशरण

संभवतः तुम्हारा इतिहास भी वैसा ही है, जैसा कि उसका है।

प्रकाशचंद्र

जी नहीं, एक ही साथ मेरी दो प्रेमिकाएँ नहीं रहीं और न मेरे कारण उनका नाश हुआ। उनमें से

न तो कोई मारी गई और न किसी को काले पानी की सज़ा हुई।

राघवशरण

संभव है, बिलकुल ऐसा न हुआ हो, लेकिन कुछ इस तरह का है, इसमें तो संदेह नहीं। कदाचित् तुम समझते हो कि मैं तुम्हारा इतिहास नहीं जानता। लेकिन ऐसा नहीं है। मैं तुम्हारा इतिहास भी जानता हूँ। तुम लेखक हो और अच्छे लेखक हो, इसमें कोई संदेह नहीं। लेकिन तुम अच्छे व्यक्ति भी हो, यह मैं नहीं कह सकता। इसलिए तो कहता हूँ—अपने इस व्यक्तित्व को मिटा कर विश्व-व्यक्तित्व स्वीकार कर लो। उसके प्रति जो तुम्हारी यह क्षमा है—पापी के प्रति जो तुम्हारी यह सहानुभूति है, जिसे शायद तुम अपना गौरव समझो, उसका कारण तुम्हारा अपना इतिहास है। उसे क्षमा कर तुम अपने को क्षमा करते हो। (उसकी ओर ध्यान से देखने लगता है। प्रकाशचंद्र सिर पर हाथ रख कर नीचे की ओर देखने लगता है) शायद अब तुम समझ गये कि मैं तुम्हारा इतिहास जानता हूँ। लेकिन इसमें

लज्जा की बात नहीं है। मनुष्य से ऐसी बातें हुआ करती हैं। ज़रूरत है केवल सुधार की। जो बिगड़ गया, उसे बनाना होगा। जो बंद है, उसे रास्ता देना होगा।

प्रकाशचंद्र

जी, विधान की बातें सब के लिए नहीं होतीं। कम से कम मेरे लिए तो नहीं है। संसार के लिए या अपने लिए, आप जो समझें, मैं अपना रक्त जलाकर प्रकाश कर रहा हूँ, लिखते समय मेरी आत्मा किस चाहना में रहती है, मेरे हृदय में कैसी ज्वाला लहक उठती है, इसे आप नहीं समझते। कोई नहीं समझता। कोई कहता है—अच्छा लिखा, कोई कहता है—बुरा लिखा। मैं विचारों और भावों का पागल, संसार का विधान नहीं जानता और न जानना चाहता हूँ। रही जीवन की बात, सो, मुझे उसी रूप में जीना है, जिस रूप में मेरी लेखनी चलती रहे और शायद जिस दशा में मैं हूँ, वह मेरे लिये सबसे अधिक अनुकूल है। मेरा क्या बिगड़ गया। उसे तो मैं अपना पुनर्जन्म समझता हूँ। आप जानते

हैं मेरा इतिहास और उसका इतिहास। आप नैया-यिक बुद्धि से उस पर विचार करें। मुझे तो यह सब भूल जाना है।

राघवशरण

उससे लाभ.........

प्रकाशचंद्र

लाभ में मेरा विश्वास नहीं.........

राघवशरण

और हानि में ?

प्रकाशचंद्र

आत्मा के आंदोलन में लाभ और हानि दोनों ही एक हैं। संभव है, उसका इतिहास बुरा हो, संभव है, मेरा इतिहास भी बुरा हो। दस-बीस वर्षों का इतिहास जीवन के अनन्त प्रवाह में कौन खोजे और कहाँ खोजें ?

राघवशरण

हूँ..... तो संसार जिस धुरी पर, विधान और व्यवस्था के जिस आधार पर स्थिर है, उसमें तुम्हारा विश्वास नहीं। प्रवृत्तिवाद और संदेह-

वाद जो तुम लोगों ने पश्चिम से सीखा है, तुम्हारे लिए सब से बड़ा अध्यात्म हो रहा है। तुम समझते हो, वह तुम्हें प्रेम कर रही है, लेकिन यह संभव नहीं।

प्रकाशचंद्र

सो क्यों ?

राघवशरण

इसलिए कि यह अंग्रेज़ी पढ़ी लड़की, जो अपने बाप के साथ विलायत गई थी, अपने बाप के वहीं मर जाने पर अपने दो बैरिस्टर मित्रों के साथ देश लौटी, अंग्रेज़ लड़कियों की नक़ल पर दोनों के साथ खिलवाड़ करती रही ! उन अभागों ने समझा कि वह उनको प्रेम कर रही है। वे आपस में प्रतिद्वंदी बन बैठे। (पेड़ की ओर हाथ उठा कर) यहीं, इसी पेड़ के नीचे, उसने रिवाल्वर चलाया था (कनपटी पर हाथ रख कर) ठीक यहाँ गोली लगी। वह मरा और वह काले-पानी गया ! अभी हाल में सम्राट् की राजगद्दी की

खुशी में जो कुछ क़ैदी छूटे हैं, उनमें वह भी छूटकर आ गया है ?

प्रकाशचंद्र

(उद्वेग के स्वर में) आ गया है छूट कर ?

राघवशरण

हाँ..(पेड़ की ओर हाथ उठा कर) देखा नहीं दोपहर को वहाँ। जिसको तुमने पागल बनाया था, वह जो अभी शाम को नदी के किनारे पर लेटा हुआ था।

प्रकाशचंद्र

मैं तो उसे कई बार यहाँ बैठे देख चुका हूँ।

राघवशरण

हाँ, उसे लौटे दो महीने हुए। दिन में एक बार यहाँ आता है।

प्रकाशचंद्र

उसके घर पर कोई नहीं है ?

राघवशरण

(मकान की ओर हाथ उठा कर) यह घर उसी का है। इस लड़की से उसकी शादी हो गई थी और

उसी अधिकार से वह इस घर में है (प्रकाशचंद्र वहीं धरती पर बैठ कर घुटनों पर सिर रख देता है) इसीलिए तो कह रहा हूँ, विधान मानना होगा। निवृत्ति का स्थान प्रवृत्ति के बहुत ऊपर है। व्यक्ति का कल्याण इसी में है कि वह संयम करे। शास्त्र तो पुराने हो गए, लेकिन सिद्धांत अभी नये हैं।

(राघवशरण टहलता हुआ कुछ दूर निकल जाता है। मकान का दरवाज़ा खुलता है। भीतर से रोशनी निकल कर बाहर कुछ दूर तक फैल जाती है। सफ़ेद साड़ी पहने एक स्त्री निकलती है, जो प्रकाशचंद्र के पास आकर खड़ी होती है। थोड़ी देर तक वह उसकी ओर देखती रहती है— फिर वहीं बैठ कर उसके कंधे पर हाथ रख देती है।)

प्रकाशचंद्र

कौन ? मायावती ? (फिर उसी तरह घुटनों पर सिर रख देता है)

मायावती

जी, तबीयत कैसी है ? अभी कुछ सोचना ठीक नहीं है। बीमारी फिर बढ़ जाएगी।

(प्रकाशचंद्र उसके मुँह की ओर ध्यान से देखने लगता है)

कोई चिंता है क्या ?

प्रकाशचंद्र

(उसकी ओर ध्यान से देखता हुआ) माया......

मायावती

जी.........

(प्रकाशचंद्र फिर उसी तरह घुटनों पर सिर रख देता है। मायावती थोड़ी देर तक उसके पास चुपचाप बैठी रहती है । राघवशरण एक ओर से घूमता हुआ वहाँ आकर खड़ा होता है। दूर पर कोई बाँसुरी बजाने लगता है, जिसका स्वर क्रमशः ऊँचा होता जाता है।)

राघवशरण

(प्रकाशचंद्र के सिर पर हाथ रख कर) चलो जी.........चलो वह सुनो बाँसुरी बज रही है।

मायावती

बजाने वाला.........कौन......

राघवशरण

तुमने उसे देखा है .....उसकी बाँसुरी सुनी है। तुम्हारे लिए वह अपरिचित नहीं है।

मायावती

संभव है, वह मेरा परिचित हो। प्रश्न तो यह है

कि मेरे परिचितों में वह कौन है ? साथ ही साथ, आपके शब्द तो व्यंग्य के मालूम होते हैं।

राघवशरण

यह तो स्वभाव है। मुझे जो कुछ कहना होता है साफ़ कहता हूँ।

मायावती

आपका यह स्वभाव औरों के लिए घातक हो सकता है।

राघवशरण

विशेषतः तुम्हारे लिए......

मायावती

मेरे लिए नहीं......आपका स्वभाव मैं बहुत दिनों से जानती हूँ। मुझे इस बात की ज़रूरत नहीं मालूम हुई कि (प्रकाशचंद्र की ओर संकेत कर) इन्हें भी सावधान कर दूँ। मेरा और आपका जीवन प्रायः एक सा रहा है। हम दोनों उपदेशक हैं। हम दोनों दार्शनिक हैं। ज़िन्दगी की बिजली और वज्र का आघात हम दोनों ने बर्दाश्त किया है। हम दोनों ही क्रूर हैं। (प्रकाशचंद्र की ओर संकेत कर) इनकी बात

दूसरी है। इनका हृदय, इनकी आत्मा, इनका शरीर सब कुछ कोमल है। संसार न तो इनके लिए है और न ये संसार के लिए हैं। संसार का दिलबहलाव इनसे हो सकता है—होता है—आपका मेरा......सब किसी का, बस यही इनकी जरूरत है, आपके लिए मेरे लिए......सब किसी के लिए। आप इनसे सावधान रहें। इनको आघात न लगे। जिस अंश में ये संसार के हैं, उसी अंश में आपके हैं और उसी अंश में मेरे भी हैं।

राघवशरण

(गंभीर मुद्रा में उसकी ओर देखता हुआ) यह आशा तो मुझे न थी।

मायावती

क्या ?

राघवशरण

यही कि किसी स्त्री के मुख से मुझे इतना बड़ा व्याख्यान सुनना होगा !

मायावती

मुझे भी आशा न थी।

राघवशरण

कैसी आशा......?

मायावती

यही कि मुझे किसी पुरुष के मुख से उसका इतना आत्मज्ञान सुनना होगा।

(प्रकाशचंद्र उठकर एक ओर को चल देता है)

राघवशरण

इस खेल का यहीं अंत कर दो। इसी में भलाई है।

मायावती

किसकी......

राघवशरण

तुम्हारी......

मायावती

हर्गिज़ नहीं। आपकी। आप अपनी ओर देखिए। आप कितने बड़े भ्रम में पड़ गए हैं। आप समझते होंगे......

राघवशरण

क्या?

मायावती

वह देखिए कहाँ जा रहे हैं ? उन्हें सम्हालिए। मेरा और आपका समझौता तो हो ही जाएगा। इसमें इतनी जल्दी क्या है ? मैं यह तो नहीं कहती कि मैंने उनकी सब ओर से भलाई की है। लेकिन उन्हें जो इतनी कीर्ति मिली है, उसका कारण·····

राघवशरण

उसका कारण बहुत-कुछ तुम हो, यही न ? लेकिन, अख़बारी कीर्ति और सामाजिक कीर्ति में बहुत कुछ अंतर है।

मायावती

जिस चीज़ को आप सामाजिक कीर्ति कहते हैं, उसका संबंध इस युग में चालीस-पचास वर्ष की ज़िंदगी से है। लेकिन आज जो अख़बारी कीर्ति है, वह अक्षय और अमर है। एक के लिए दूसरी को छोड़ना पड़ता है।

राघवशरण

इन दोनों का समन्वय किया जा सकता है।

मायावती

जी हाँ, सोने को लुट जाने के भय से कोयले में

रखा जा सकता है। कोई बुराई नहीं। लेकिन सोना है नहीं इसके लिए। जब कभी वह कोयले से अलग किया जाएगा, उसके लुट जाने का भय पैदा हो जाएगा।

राघवशरण

लेकिन वह लौट आया ?

मायावती

कौन ?

राघवशरण

वही कालेपानी का मुलजिम······

मायावती

जानती हूँ······

राघवशरण

यह बाँसुरी उसी की बज रही है।

मायावती

हाँ·····है उन्हीं की······

राघवशरण

वहाँ नदी के किनारे बजा रहा है। उस एकांत में····· जहाँ मनुष्य नहीं हैं। (ऊपर हाथ उठा कर)

ये असंख्य नक्षत्र और चंद्रमा। आगे नदी बह रही है। उसके चारों ओर सुनसान एकदम सन्नाटा है। वह अपराधी इस आज की लुभावनी प्रकृति का राजा बन बैठा है। और तुम······

मायावती

मैं क्या ?

राघवशरण

तुम यहाँ हो ?

मायावती

तब······?

राघवशरण

तुम्हारा उससे विवाह जो हुआ था ?

मायावती

कभी नहीं। कोई पुरुष पैदा नहीं हुआ, जिसके साथ मेरा—(सिर हिला कर आवेश के स्वर में) मेरा विवाह होता !

राघवशरण

तुमने तो इसी अवस्था में तीन-तीन विवाह किए ?

मायावती

(हँसती हुई) जी नहीं। इस देश में विवाह का जो आदर्श है—स्त्री पुरुष का, दो जीवन और दो आत्मा का, मिल कर एक हो जाना—उनकी व्यक्तिगत भिन्नता का नाश, और एक सम्मिलित व्यक्तित्व का उदय, इसका अवसर मुझे नहीं मिला। मेरा विवाह तो अंग्रेजी ढंग का हुआ था, जिसमें संदेह है, डाइवोर्स है, पुरुष के प्रति प्रतिहिंसा है। जिसके मूल में ही यह भावना है कि बच्चे न पैदा हों, किसी तरह का बंधन न हो। (पेड़ की ओर हाथ उठा कर) उस हत्या के बाद मुझे होश हुआ। लेकिन अब तो रास्ता नहीं था न? जिनके यहाँ मुर्दे क़यामत तक क़ब्र में पड़े रहेंगे और क़यामत के बाद जगाए जाएँगे और तब उनका हिसाब होगा—वे जो चाहें करें। वे बहुत कुछ बुरा-भला कर सकते हैं, उनके लिए कोई जल्दी नहीं है। लेकिन हमारी तो क्षण-भर की चूक का फल हमें जन्म-जन्मांतर तक भोगना पड़ता है। हमारी आशा है कहाँ? हमारी मुक्ति होगी कब?

(एकाएक चुप होकर वहीं धरती पर लेट रहती है। राघवशरण उसकी ओर थोड़ी देर तक देखता रहता है। मायावती करवट घूमकर दाईं बाँह से अपना मुँह घेर लेती है। बाँसुरी उसी तन्मयता के साथ बज रही है। राघव-शरण ऊपर आकाश की ओर देखने लगता है)

राघवशरण

तो कदाचित् मैं भ्रम में था। पश्चात्ताप अगर है……

मायावती

(उसी तरह लेटी हुई) जी नहीं, मेरे लिए उसका अवसर नहीं है।

राघवशरण

तब……

मायावती

जो हो……

राघवशरण

एँ……

मायावती

मुझे धोखा हुआ। अब मुझे अपनी बुद्धि का

विश्वास नहीं है। स्त्री की बुद्धि का भरोसा तो……
(चुप हो रहती है)।

राघवशरण

सरकार स्त्रियों को पृथक अधिकार दे रही है। व्यवस्थापिका सभाओं में पुरुषों के साथ साथ विधान और व्यवस्था का काम उन्हें दिया जा रहा है। इस युग के मनोवैज्ञानिक स्त्रियों को पुरुषों की तुलना में अधिक बुद्धिमती और क्रिया-शील कह रहे हैं।

मायावती

नए युग के इन नए प्रयोगों का परिणाम अच्छा नहीं होगा। मेरे लिए तो अच्छा नहीं हुआ। विलायत में मैं उन दिनों पाँच वर्ष तक स्त्री-संघ की सदस्या रही। उन नए विचारों का तूफ़ान लेकर जो मैं इस देश में आई—यहाँ का दांपत्य जीवन मुझे गुलामी, मूर्खता और जातिहीनता का परिचायक प्रतीत हुआ। मैंने चाहा यहाँ स्त्रियों के लिए आदर्श बनना। अपनी स्वतंत्रता की धुन में नई सभ्यता और नई रोशनी की चमक-दमक में, आज अनुभव हो रहा है, मैं अंधी हो गई थी। पुरुष

और स्त्री का द्वन्द्व, समानता का अधिकार पश्चिम की हवा है। यह हवा यहाँ पहुँच कर हमारे दांपत्य, हमारे सामाजिक जीवन की सब से बड़ी समस्या हो रही है।

राघवशरण

इतना समझ कर प्रकाश से विवाह करने की क्या जरूरत थी?

मायावती

इसका जवाब मेरे पास तो नहीं है।

राघवशरण

कुछ तो कहना होगा!

मायावती

जी, यही तो बुराई है। स्त्री पुरुष को क्यों चाहती है? इस विषय पर तर्क नहीं किया जा सकता। अपनी सफ़ाई मैं यों दूँगी—मैंने उन्हें अपने पुरुष के रूप में नहीं ग्रहण किया।

राघवशरण

तब... ...

मायावती

मुझे किसी साथी की जरूरत थी। पुरुष की

नहीं। जिस योग्य मैं नहीं थी, वह मैं करती कैसे? इस बार तो मैं सचेत थी। मुझे ज़रूरत थी कि मैं अपना नाश कर डालूँ। अपनी स्वतंत्रता का, अपनी नई सभ्यता और दंभ का। मुझे ज़रूरत थी, पुरुष की, जो पुरुष होते हुए भी पुरुष न हो। जिसके साथ रहने में किसी तरह का ख़तरा न हो। जिसके साथ शारीरिक सुख-भोग और रसमय जीवन की आशंका न हो। जिसकी इतनी चिंता करनी पड़े कि उससे कुछ लेने, माँगने या आग्रह करने का अवसर ही न मिले। संतोष है, मुझे वह मिल गया। सेवा करना मैं चाहती थी, कर रही हूँ। स्त्री को अवसर मिल सके कि वह पुरुष की सेवा करे। संसार जब इन नये प्रयोगों से ऊब जाएगा, इस प्रयोग की ओर झुकेगा।

राघवशरण

अच्छा हो तुम इस बात का प्रचार करो।

मायावती

जी नहीं, जो प्रकृति है, प्रचार उसका नहीं किया जा सकता और न होना चाहिए। यों तो

प्रकृति के नाम पर आज के सभी प्रचार प्रकृति के विरुद्ध हो रहे हैं। (एकाएक उठ कर खड़ी होती हुई) वह गये कहाँ ?

राघवशरण

होंगे कहीं...इतनी घबराहट की क्या जरूरत है ?

मायावती

यही तो इन दिनों मेरी ज़िन्दगी है। न मालूम क्यों मुझे इस बात की आशंका हो उठती है कि कहीं उनकी कोई बुराई न हो जाय। (मुसकरा-कर) मैं साल के सभी व्रत रखती हूँ, जो यहाँ स्त्रियाँ रखती हैं। जिस बातों को पहले अंध-विश्वास और मूर्खता समझती थी, अब उनकी सचाई का अनुभव कर रही हूँ। स्त्री पुरुष की मंगल-कामना से व्रत रखती है—निर्जल, निराहार कभी-कभी दो दिन बीत जाते हैं। इसका आध्यात्मिक और मनोवैज्ञानिक प्रभाव पुरुष पर पड़ता है, इसमें संदेह नहीं। साथ ही साथ प्रवृत्तियों का संयम भी होता है।

राघवशरण

इसका मतलब यह, कि तुम वह कुछ नहीं हो, जो मैं समझता था।

मायावती

ऐसा तो नहीं। मैं तो वह सब कुछ हूँ, जो आप समझते थे। (राघवशरण संदेह से उसकी ओर देखता है।) कदाचित् आपको संदेह या विस्मय हो रहा है। मुझ से जो कुछ हो गया—मेरा हो गया। उससे मैं छूट तो नहीं सकती न? इस जीवन में तो नहीं। इसलिए मैं वह सब कुछ हूँ, जो कि आप समझते थे। आप समझते हैं, सुधार से सब कुछ हो सकता है—पैवंद से काम चल जाय—कपड़ा नया नहीं होता। मैं तो पुनर्निर्माण और पुनर्जन्म चाहती हूँ। सुधार इस जीवन का नहीं, उस आने वाले जीवन का करना होगा और मैं यही कर रही हूँ। अपनी आत्मा से अपने हृदय से उन सभी संस्कारों को निकाल रही हूँ, निकालना चाहती हूँ, जिनका मोह इस जन्म में इतना प्रबल रहा है। मेरी इच्छा है, मैं जिस समय मरने लगूँ, केवल एक अपढ़, गँवार हिंदू स्त्री रहूँ।

राघवशरण

तो कदाचित् तुम स्त्री-शिक्षा का भी विरोध करती हो।

मायावती

बिलकुल शिक्षा का नहीं। उसके परिणाम और उसकी प्रणाली का।

राघवशरण

हूँ......

मायावती

जी...जिन दिनों मैं इतिहास पढ़ती थी... एलिजावेथ का चरित्र मेरे लिए विस्मय और आदर्श का उपादान हो रहा था—जोजेफाइन मेरे लिए एक सुंदर पहेली—सुंदर समस्या—थी। यूरोप के नारी-सुधार-आंदोलन में जिन स्त्रियों ने भाग लिया था, उन्हें मैं देवी समझती थी। लेकिन क्या सभी कहीं आत्म वंचना और दंभ, स्वतंत्रता के नाम पर वासना की अभितृप्ति नहीं थी। जो चीज़ एलिजावेथ के चरित्र को विभूति समझी जाती है, असल में उस साम्राज्ञी का सब से बड़ा कलंक भी वही है। उसके कौमार्य का अर्थ क्या था? ब्रह्मचर्य या व्यभिचार?

राघवशरण

इस प्रकार उत्तेजित न हो उठो !

मायावती

चाहती तो यही हूँ। लेकिन अपने को रोक नहीं पाती। (छाती पर हाथ रख कर) बाढ़ आई है। बाँध अगर न टूटा, तो इधर का सब कुछ डूब जाएगा ! इस शिक्षा से मेरा स्त्रीत्व तो बिगड़ गया—लेकिन मिला क्या ?

राघवशरण

कुछ नहीं ?

मायावती

कुछ नहीं। रक्त की उत्तेजना को, जवानी की वासना और उन्माद को अंग्रेजी पढ़ी सभी लड़कियों की तरह मैंने भी नारी-स्वतंत्रता और नारी-समस्या कह कर दुनियाँ को हिला देना चाहा था।

राघवशरण

लेकिन, अब तो तुम्हें उसका पछतावा है।

मायावती

लेकिन इससे होता क्या है ? इस पछतावे का

अब फल क्या ? पछतावा पाप धो डालता है, यह तो ईसाइयों की बाइबिल है। सब कुछ करके अपने खुदा से माफ़ी माँगते हैं, उनके खुदा का लड़का उन्हें माफ़ करा भी देता है। हमारी नियति तो क्षमा नहीं करती। उसका विधान तो दंड है—इस जन्म के लिए उस जन्म में, उस जन्म के लिए इस जन्म में। पूर्वजन्म के कर्मों के अनुसार हमें फिर जन्म लेकर उनका भोग भोगना पड़ता है। यही तो हमारा वैज्ञानिक सत्य है।

राघवशरण

हाँ।

मायावती

तब आप किस चिंता में पड़े हैं—(हँसती हुई) क़यामत तक मुझे क़ब्र में नहीं रहना है। मैं जहाँ हूँ, वहीं रहूँगी न मालूम कितनी बार पैदा हुई, कितनी बार अभी और पैदा होना है—माला की असंख्य मनियों में अगर एक फूट गई, दूसरी लगा दी जाएगी। (सिर हिला कर) है ठीक न ?

(राघवशरण गंभीर होकर कुछ सोचने लगता है) तो आप विचार करने लगे। आपने अपना सुधार किया है, आप समझते हैं, आपका पाप धुल गया। लेकिन मैं ऐसा नहीं समझती। जो बिगड़ गए, उनकी आशा न कीजिए—जो आने वाले हैं उनसे सावधान रहिए—वे न बिगड़ें। मुझे या आपको इस जीवन में मुक्ति नहीं मिल सकती।

राघवशरण

संभवतः

मायावती

संदेह है······

राघवशरण

क्यों ?

मायावती

ऐसा नियम नहीं······

राघवशरण

क्यों ?

मायावती

इसलिए कि हम क़यामत तक क़ब्र में सोने वाले नहीं हैं!

राघवशरण

(हँसते हुए) वाह तुमने तो······

मायावती

(गंभीर होकर) जी·····

राघवशरण

तो शायद तुम जीत जाओगी । सामाजिक मर्यादा और विश्व-विधान के उस पार तुम्हारा व्यक्तित्व पहुँच जाएगा ।

मायावती

इस जीत और हार का मोह व्यर्थ है । सामाजिक मर्यादा और विश्व-विधान ऐसी चीज़ें नहीं है, जो तोड़ी जायँ । व्यक्तित्व का विकास इनके भीतर हो, यही अच्छा है । लेकिन अगर कोई इसे तोड़ दे । वह बुरा भी हो सकता है—भला भी हो सकता है—यह तो परिस्थिति पर निर्भर है । मनुष्य मजबूर होकर कभी ऐसी बातें कर बैठता है, जो साधारणतः उससे नहीं होनी चाहिए । मनुष्यता की यह विडंबना धार्मिक संस्कारों से मिट सकती है । अपनी ही भलाई, अपनी ही रक्षा के लिए मनुष्य ने अपने लिए बंधन

बनाया था। मैंने तोड़ तो दिया, लेकिन समाज और संस्कार के बंधन में उपयोगी समझती हूँ।

(धरती पर बैठ कर आकाश की ओर देखने लगती है। राघवशरण कुछ देर तक खड़ा रहता है फिर एक ओर निकल जाता है। उसके चले जाने पर मायावती आकाश की ओर मुँह कर वहीं लेट रहती है। चंद्रमा के प्रकाश में उसका शीशफूल और नाक की कील चमक उठती है। उसकी अवस्था शारीरिक दुर्बलता के कारण अधिक मालूम हो रही है, लेकिन तब भी उसकी जवानी का उतार नहीं कहा जा सकता। उसका पीला कोमल शरीर आकर्षक और मोह का उद्दीपक अब भी है। लंबी बड़ी आँखें उनके नीचे पतली रेखा. उसकी चिंता प्रकट कर रही हैं। वह चुप-चाप आकाश की ओर देखती रहती है। प्रकाशचंद्र का प्रवेश। वह उसके पास जाकर खड़ा होता है और उसके मुँह की ओर देखने लगता है। दोनों उसी दशा में थोड़ी देर तक देखते रहते हैं।)

मायावती

(उसी तरह लेटी हुई) कहाँ गए थे ? (प्रकाशचन्द्र चुप रहता है) बोलो भी ? (प्रकाशचन्द्र एक ओर, जिधर बाँसुरी बज रही है, हाथ उठाकर संकेत करता है) किसलिए?

प्रकाशचन्द्र

(चिंता के स्वर में) जिधर बाँसुरी बज रही है।

मायावती

नदी किनारे......

प्रकाशचंद्र

हाँ......

मायावती

अकेले ?

प्रकाशचंद्र

हाँ .....

मायावती

डरे नहीं ?

प्रकाशचंद्र

नहीं।

(थोड़ी देर तक फिर दोनों चुप रहते हैं)

मायावती

उद्विग्न देख पड़ते हो !

प्रकाशचंद्र

संभव है।

मायावती

(चौंककर उठती हुई) ऐं ! हुआ क्या जी ? (उसके कंधे पर हाथ रख कर) विरक्त न होना मुझ से। तुम्हारे ही सहारे यह जीवन चल रहा है। नहीं तो अब तक तो······

प्रकाशचंद्र

तुमने मुझे धोखा दिया। मुझे क्या पता कि तुम विवाहित हो। और तुम्हारे कारण ·····

मायावती

(गंभीर मुद्रा में) मैंने तुमसे कभी कोई इच्छा नहीं प्रकट की। पाँच वर्ष बीत गए ·····तुमने मुझे कभी कुछ दिया ? कुछ भी ? तुम्हारी सेवा में ही मुझे जो कुछ मिला हो—चाहे जितना सुख और संतोष। मुझे इतने का भी अधिकार नहीं था क्या ?

प्रकाशचंद्र

जानती हो यह बाँसुरी कौन बजा रहा है ? वहाँ नदी किनारे ? (मायावती धरती की ओर देखती हुई चुप रहती है) बोलो भी ? संदेह का आघात मेरा हृदय नहीं सह सकता !

मायावती

तुम से झूठ न बोलूँगी।

प्रकाशचंद्र

अच्छा तब······

मायावती

इस समय नहीं। कल सबेरे पूछ लेना। वह कौन है? उसकी परिभाषा के लिए मुझे शब्द खोजने पड़ेंगे।

प्रकाशचंद्र

तुमने मुझसे कहा क्यों नहीं?

मायावती

मैं यह समझती थी और अब भी समझती हूँ कि संसार की छोटी बातें तुम्हें न छू सकेंगी। तुम स्वर्ग के वज्र हो, जो कभी-कभी धरती छू लेता है। तुम्हारी इच्छा निष्काम है, क्योंकि तुम रचियता हो, तुम्हारी कल्पना सजीव और सत्य चरित्रों का निर्माण कर सजीव और सत्य जगत् का निर्माण करती है। मैंने जो कुछ भी किया हो, क्या उसका स्थान तुम्हारी कल्पना में नहीं है?

(प्रकाशचंद्र चुप होकर आकाश की ओर देखने लगता है। मायावती उसकी छाती पर अपना सिर रख देती है। प्रकाशचंद्र की दोनों बाहें उसके कंधे से होती हुई उसकी पीठ पर आ जाती हैं।)

[पर्दा गिरता है]

दूसरा अंक

(वही मकान जिसके सामने के तीन दरवाज़े खुले हैं। मकान के आगे की ओर एक ही बड़ा कमरा या दालान है जिसमें ये तीन दरवाज़े लगे हैं। कमरे में विशेष आडम्बर की कोई चीज़ नहीं है। नीचे पूरे कमरे में एक दरी बिछी है। बीच वाले दरवाज़े के ठीक सामने एक रंगीन छोटा क़ालीन और उस पर पिछली दीवार की ओर एक छोटी मसनद, एक

और काठ की एक चिकनी चौकी, जिसकी लंबाई प्रायः डेढ़ हाथ और चौड़ाई एक हाथ है। चौकी के ऊपर कुछ लिखे हुए पन्ने इधर उधर पड़े हैं। कई पन्ने पीछे की ओर और कई आगे फ़र्श पर गिरे पड़े हैं। पिछली दीवार में मकान के भीतर जाने का दरवाज़ा है जो बाईं ओर कोने के पास है। वही रात है। बादल निकल गये हैं। चाँदनी और निखर गई है। चौकी के पीछे काठ की दीवार पर दीपक जल रहा है, जिस की लौ हवा की चाल के अनुसार घट बढ़ रही है। कमरे में इस समय कोई नहीं है।

बाहर की ओर से राघवशरण का प्रवेश। राघवशरण बीच वाले दरवाज़े से भीतर आकर क़ालीन के पास खड़ा होता है। एक ओर घूम कर दीवट के पास पहुँचता है और दीपक की बत्ती बढ़ाता है, रोशनी बढ़ जाती है। कमरे में ध्यान से इधर उधर देखता है। उसके चेहरे से विस्मय और सन्देह की रेखा प्रकट होती है। कमरा पार करता हुआ पिछले दरवाज़े से भीतर निकल आता है। थोड़ी देर तक सन्नाटा रहता है।

मायावती और राघवशरण भीतरी दरवाज़े से प्रवेश करते हैं। मायावती कमरे के सामने, बाहर निकल कर, ऊपर आकाश की ओर देखती है।)

राघवशरण

क्या देख रही हो ?

मायावती

रात कितनी बीत गई।

राघवशरण

तुम्हारे पास घड़ी है।

मायावती

थी तो······

राघवशरण

क्या हुई···?

मायावती

फेंक दी···

राघवशरण

क्यों?

मायावती

(गंभीर होकर) घड़ी से जीवन की स्वाभाविकता बिगड़ जाती थी। समय की बिल्कुल सही जानकारी व्यर्थ है। जिन लोगों ने संसार को एक बड़ा कारखाना बना लिया है उनके लिये यह जरूरी है, सब के लिए नहीं। यहाँ आइये। (राघवशरण उसके पास जाकर खड़ा होता है। मायावती

आकाश की ओर हाथ उठा कर संकेत करती है) देख रहे हैं वह छोटे-छोटे तारे, जो एक दूसरे के बिल्कुल पास होने के कारण खिले हुए फल के एक गुच्छे की तरह हो गये हैं, (दूसरी ओर हाथ उठा कर) और तारों की वह हीन रेखा, रात को घड़ी का काम इन दोनों से चल जाता है। दिन के लिए तो सूर्य है ही। प्रकृति की घड़ी से समय का काम चल जाता है। कल-पुर्ज़ों की घड़ी एक तो बनती बिगड़ती रहती है, इसके अलावा...इसके अलावा यह मौलिक बुद्धि का नाश कर मन को नीरस कर देती है। आज कल जिस चीज़ को सभ्यता कहते हैं वह कितनी नीरस है ? (गंभीर होकर सोचने लगती है)

राघवशरण

सन्देह हो रहा है तुम करना क्या चाहती हो ?

मायावती

मैं......

राघवशरण

हाँ...तुम !

मायावती

आत्महत्या। जानती हूँ इस प्रकार मैं मुक्त तो न हो सकूँगी। मेरा बोझ और अधिक बढ़ जायगा। लेकिन यह जीवन शायद इसीलिए था। आपने अभी देखा है उन्हें। उनकी बीमारी कुछ समझ में तो आती नहीं। रोग का शारीरिक लक्षण तो कोई नहीं है।

राघवशरण

नहीं।

मायावती

लेकिन वह बीमार हैं। क्षण भर में ही उनका मरने लगना—इतनी बेचैनी...मन को कुछ भी आघात पहुँचा—नाड़ी की गति साधारणतः दूनी हो गई, हाथ-पैर ठंडे हो गये, अब-तब की नौबत आ गई, यह है क्या ?

राघवशरण

इसके लिए तुम क्या कर सकती हो ?

मायावती

लेकिन यह बीमारी यहाँ आने पर उनको

होने लगी। (पेड़ की ओर हाथ उठा कर) विशेषतः उस पेड़ के नीचे—उस जगह जब कभी जा पड़ते हैं दौरा आ जाता है। इस समय तो अवस्था प्रायः सुधर गई है। दो घंटा पहले तो ऐसा मालूम होता था, अब न बचेंगे।

राघवशरण

मानसिक बीमारियाँ ऐसी ही होती हैं।

मायावती

इनकी बीमारी और इस पेड़, इसकी आस-पास की धरती और मुझ से विशेष सम्बन्ध है, कदाचित् सभी मानसिक बीमारियों में कोई न कोई ऐसी ही परिस्थिति होती होगी।

राघवशरण

(विस्मय के स्वर से) ऐं, तुम्हारा मतलब···?

मायावती

इसी पेड़ के नीचे वह घटना जो हुई थी! (गंभीर होकर) शायद वह यहीं इसी पेड़ पर है। (चुप हो जाती है और पेड़ की ओर स्थिर दृष्टि से देखने लगती है)

राघवशरण

ओह ! तो तुम पुनर्जन्म के साथही साथ प्रेतात्मा में भी विश्वास करती हो।

मायावती

यही तो समस्या है। अभी तक इसी का निश्चय नहीं कर सकी। पुनर्जन्म तो वैज्ञानिक सत्य है ही— प्रेतात्माओं के सम्बन्ध में (कुछ सोचती हुई) भी सर ओलिवर लाज सरीखे प्रसिद्ध वैज्ञानिक ने बहुत कुछ कह दिया है। कदाचित् सभी मानसिक बीमारियों का सम्बन्ध किसी न किसी प्रेत से है।

राघवशरण

छीः, इस युग में यह भावना... ...

मायावती

(उद्वेग के स्वर में) तो आप प्रेत की सत्ता से इन्कार करते हैं।

राघवशरण

ज़रूर...

मायावती

तब तो आप नास्तिक हैं।

राघवशरण

अरे ! ईश्वर और प्रेत दोनों एक ही हैं क्या ?

मायावती

देखिए, भावना तो दोनों ही की एक है। इस युग में जो नास्तिक हैं वे प्रेत हर्गिज़ नहीं मानते।

राघवशरण

लेकिन वे जो सभ्य हैं प्रेत नहीं मानते।

मायावती

हाँ, लेकिन वे जो सभ्य हैं ईश्वर भी नहीं मानते। संसार अब तक जो मानता आया है, उसे न मानना ही तो सभ्यता है। आज कल मानना या न मानना तो शब्दों पर निर्भर है, जिसे मैं सीधे शब्दों में आत्म-वञ्चना या अपने तईं धोखा देना कह सकती हूँ। भूत न मानने वाले आज के सभ्य मनुष्य कितना अधिक भूत से डरते हैं, अँधेरी रात में घर से सौ गज़ दूर जाना उनसे अकेले नहीं हो सकता—हवा की आहट भी उनके लिये खतरे की घंटी हो जाती है। लेकिन वह जो भूत मानते थे उनके पास भूत की दवा भी थी। वे बातों के बड़े और आत्मा के छोटे

न थे। (आवेश के स्वर में) स्मशान के भीतर, आधी रात को, अँधेरी रात में मुर्दे की छाती पर बैठ कर शक्ति की आराधना करने वाले सम्भव है मूर्ख रहे हों, लेकिन कौन कह सकता है कि इस प्रकार प्रकृति में जो भीषण है, उसके ऊपर उनको विजय नहीं मिलती थी, उनका व्यक्तित्व मनोविकारों के ऊपर नहीं उठ जाता था ? जिस चीज़ की धारणा हमारे पास नहीं है वह सब ग़लत है, यह कैसे कहा जाय ? अदालतों में न्याय करने वाले और तर्क करने वाले शिक्षालयों में पढ़ने वाले और पढ़ाने वाले, मनुष्य हैं !—अगर हैं तो इनका व्यक्तित्व कहाँ है ?

राघवशरण

अच्छा तो तुम समझती हो कि वही...

मायावती

जी हाँ, मैं समझ रही हूँ उसकी अकाल मृत्यु हुई थी। वह प्रेत होकर मेरा ध्वंस कर रहा है। उसकी लालसा उसके साथ जो गई।

(ऊपर से कोई आवाज़ आती है। मायावती चौंक पड़ती है और दौड़ती हुई भीतर चली जाती है। राघवशरण भी तेज़ी से उसके पीछे जाता है)

मायावती

(नेपथ्य में) कोई सपना देख रहे थे क्या ? इस प्रकार चिल्ला क्यों पड़े ?

प्रकाशचन्द्र

(टूटे हुए शब्दों में) हाँ...मालूम...हु...आ... जै...से कोई...

राघवशरण

चित्त शान्त करो। तुम्हें क्या मालूम हुआ ? इस तरह ज़ोर से साँस क्यों ले रहे हो ? शान्त हो शान्त। इस तरह चारों ओर देख क्यों रहे हो ? यहाँ कोई दूसरा नहीं है। हम लोग हैं—हम लोग।

मायावती

(भय के स्वर में) देखिये...देखिये...किस तरह देख रहे हैं ?

राघवशरण

प्रकाशचन्द्र ! प्रकाश ! प्रकाश ! इधर देखो, इधर देखो मेरी ओर, मेरी ओर। उस पेड़ की ओर क्यों देख रहे हो ?

प्रकाशचन्द्र

वहीं...वहीं...वहीं...

राघवशरण

हाँ...हाँ...कहो !

प्रकाशचन्द्र

पानी...पानी...माया, पानी देना।

(थोड़ी देर तक सन्नाटा रहता है)

मायावती

लो पानी...यह ग्लास है। बार-बार उधर क्यों देख रहे हो ? लो न पानी।

राघवशरण

उठो तो उठो...मेरा हाथ पकड़ कर। अरे इस तरह काँप क्यों रहे हो जी ? उस पेड़ पर ऐसा क्या है कि तुम्हारी नजर उसी पर अड़ गई है।

प्रकाशचन्द्र

मैं सो गया था। मालूम हुआ जैसे कोई आदमी यहाँ चारपाई पर आगे आकर बैठ गया। मैं इस तरह पड़ा था कि— यहाँ यह जगह है न—यहाँ बैठ कर मेरे मुँह के पास झुक कर कहने लगा। नहीं

जाओगे तुम यहाँ से—भाग जाओ । भाग जाओ । इस स्त्री को छोड़ कर भागो नहीं तो तुम्हारी छाती चीर कर कलेजा निकाल लूँगा, इस तरह न मालूम और क्या-क्या कहता रहा । ओह ! उसके मुँह से ऐसी दुर्गंधि निकल रही थी, सिर में चक्कर आने लगा । घबड़ा कर मेरी आँख खुल गई ।

राघवशरण

इस तरह काँप क्यों रहे हो ?

प्रकाशचन्द्र

यहाँ बैठिए । इस तरह मुझे पकड़ कर । मैं डर गया हूँ, डर गया हूँ ।

राघवशरण

इस तरह न ?

प्रकाशचन्द्र

हाँ, माया ! यह दवाना जैसे खोपड़ी फूट रही है । हाँ...धीरे से, नहीं...ज़ोर से...ज़ोर से और ज़ोर से......

राघवशरण

अच्छा तब क्या हुआ ?

प्रकाशचन्द्र

तब, पकड़ लीजिए, मेरे रोयें फूट रहे हैं।

राघवशरण

इस तरह......

प्रकाशचन्द्र

हाँ !

राघवशरण

कहो तब......

प्रकाशचन्द्र

आँख खुली। कोई भयानक काला आदमी यहाँ बैठा था—इस जगह, उसका एक हाथ तो आगे यहाँ, दूसरा घूम कर यहाँ था—मेरी छाती उसके दोनों हाथों के बीच में आ गई थी—झुक कर मेरे मुँह की ओर देखता था। ओह, उसकी काली लम्बी नाक मेरी नाक के बिलकुल पास थी, साँस तो उसकी जैसे ऊपर से दुर्गंधि की आँधी आ रही थी। उसके दो दाँत यहाँ तक ओठ के बाहर बरछे की तरह निकल गये थे और ओठों से जैसे खून चू रहा था। उसके बाल की लटें बँध गई थीं—कुछ तो आगे की ओर और कुछ बगलों में लटक रही थीं। ओह !

राघवशरण

हाँ—हाँ, इस काँपने की क्या ज़रूरत है। डरो मत—हम लोग हैं, कोई बात नहीं।

प्रकाशचन्द्र

यों तो मैं कभी किसी देवता की पूजा नहीं करता। लेकिन उस समय अकस्मात् मेरे मुँह से ओ३म् जयशिव जयशिव निकल पड़ा। वह भयानक मूर्ति एकाएक आसमान में उठ गई। सीधी खड़ी मनुष्य की भयानक मूर्ति, जिसकी दोनों बाहें फैली हुई पेड़ तक उठती चली गईं। मुझे तो अब भी वहाँ—उन दोनों डालों के बीच में वह मूर्ति जैसे खड़ी दीखती है।

राघवशरण

नहीं जी कुछ नहीं। केवल भ्रम। तुम इस फेर में पड़ गये?

प्रकाशचन्द्र

मैं नहीं जानता क्या है? लेकिन मेरा अनुभव...

राघवशरण

हाँ ....

प्रकाशचन्द्र

मैं सोया नहीं था। मैंने अपनी आँख से देखा, ओह ?

मायावती

प्रतिहिंसा—मरने पर प्रेत होकर भी प्रतिहिंसा....

प्रकाशचन्द्र

प्रतिहिंसा...वहाँ किसी को कुछ नहीं देख पड़ता ?

राघवशरण

नहीं जी कहीं कुछ नहीं हैं। तुम्हारे दिमाग पर असर पड़ गया है।

(नेपथ्य में सन्नाटा छा जाता है। पेड़ के पास आकर राधाचरण खड़ा होता है)।

राधाचरण

मैं यह नहीं मानता कि मैंने कोई विश्वासघात किया। विश्वासघात तुम दोनों ने किया तुमने और माया ने ..

(पेड़ की डाल हिलने लगती है) नहीं। सुनो ! मैं जानता हूँ, इस समय तुम्हारी शक्ति मुझसे बढ़ गई है। लेकिन मैं डरता नहीं। भय न दिखाना मुझे। मैं

रात को दो महीनों से नदी के किनारे सोता हूँ—तुम कई बार मुझे तंग भी कर चुके। और शायद मेरी ताक़त का पता भी तुम्हें चल गया होगा। बुराई तुमने की थी। क्या कहा? नहीं। अरे भाई शायद तुम भूल रहे हो। हाँ, हाँ, यह क्या? नहीं मानोगे। अच्छा देखो मैं तुम्हें अभी बाँध लेता हूँ। अब कहो? छोड़ दूँ। अच्छा लो छोड़ तो देता हूँ लेकिन कभी अवसर पाकर धोखा न कर बैठना। जेन को देखने कभी नहीं गये थे? तुम तो जा सकते हो? तुम्हारे लिये पासपोर्ट की जरूरत न होगी। कुछ काल के लिये यह जगह छोड़ दो। उसे देख आओ। वही जो कुछ समय के लिये हम लोग लीवरपुल गये थे वहाँ होटल में जो लड़की हम लोगों को खाना लाती थी। कभी-कभी चोरी से तुमको गुलाब के फूल दिया करती थी। जिसे मैनेजर ने एक बार पीटा था कि बिना उसकी आज्ञा वह तुमसे प्रेम करने लगी थी। (हँसता हुआ) जाओगे उसके पास न? (थोड़ी देर तक सन्नाटा रहता है। यथाक्रम दोनों हाथों में पेड़ का तना पकड़ लेता है। पेड़ की कई डालें हिल उठती हैं)

नहीं जा सकते ?......क्यों ? क्या तुम भी स्वतन्त्र नहीं हो ? वहाँ भी पुलिस हैं ? ओह ! तुम तो निर्बल हो गये हो। अब देखा। समझता था, पहले से बली होगे। भोजन और जल बिना तुम्हारी यह दशा हुई ? इस रूप में भो भूख और प्यास का अनुभव होता है ? तुम्हें तो कोई रोक नहीं ? . अन्न और जल सब कहीं है। हूँ—तो तुम्हारे लिये भी रोक है। अच्छा तब... तो तुम तभी पा सकते हो जब तुम्हें कोई दे...कोई मनुष्य जब तुम्हारे निमित्त अन्न और जल की व्यवस्था करे। नहीं तो तुम्हें भूख-प्यास से मरना होगा ?...वाह मर भी नहीं सकते केवल उस अभाव का उस दुःख का अनुभव करना होता है।

(प्रकाशचन्द्र और मायावती का प्रवेश। प्रकाशचन्द्र क़ालीन पर बैठ कर चौकी पर लिखे हुए काग़ज़ों को बटोरने लगता है। कभी-कभी रुक कर मन ही मन कुछ पढ़ता जाता है। उसके चेहरे से उदासी और व्यग्रता प्रकट होती है)।

मायावती

(उसके पास बैठ कर) न हो यहीं सो रहो !

प्रकाशचन्द्र

अब......

मायावती

हाँ...हाँ...अभी आधी रात हुई है।

प्रकाशचन्द्र

नहीं ! नींद नहीं आती। कुछ लिखूँगा !

मायावती

इस समय—आधी रात को ?

प्रकाशचन्द्र

मैं जब बीमार पड़ता हूँ, तभी लिखने को जी चाहता है।

राधाचरण

वही दोनों हाँ, वही ..चलोगे वहाँ तुम। नहीं, नहीं। इसे क्यों सताओगे ? इसका क्या अपराध है ? वह कुछ जानता भी नहीं। मुझसे कई बार मिल चुका है, मैं तो उस पर दया करना चाहता हूँ। ओह ! तो तुम उसे सता रहे हो।

मायावती

कमजोरी में ?

राधाचरण

अभी-अभी तुमने उसकी साँस बन्द कर दी थी।

प्रकाशचन्द्र

शरीर के शिथिल हो जाने पर कल्पना जाग उठती है।

राधाचरण

लेकिन यह अन्याय है।

मायावती

तो तुम मुझे सचमुच छोड़ दोगे?

राधाचरण

यहाँ क्या हुआ वह जानता भी तो नहीं?

प्रकाशचन्द्र

मैं यहाँ जी नहीं सकता!

मायावती

(उसके गले में हाथ डालकर) हम दोनों साथ ही मरने। साथ ही मरेंगे।

राधाचरण

उसकी कल्पना इतनी सजीव है, उसकी भावना इतनी सरस है कि मायावती ऐसी स्त्री का जादू उस

पर असर कर जाय, उसके लिये स्वाभाविक हो उठता है। अच्छा तो...

प्रकाशचन्द्र

तुम सचमुच मुझे प्रेम करती हो ?

(माया झुककर उसके पैर पर अपना सिर रख देती है और सिसक- सिसक कर रोने लगती है)

राधाचरण

तो तुम किसी प्रतिहिंसा में उसे कष्ट नहीं दे रहे हो। ऐं, किसी मनुष्य के संसर्ग में रहना तुम चाहते हो और तुम्हें वही पसन्द पड़ा है।

प्रकाशचन्द्र

(उसके सिर पर हाथ रखकर) अगर तुम मुझे प्रेम करती थीं तो... (चुप हो जाता है)

राधाचरण

लेकिन वह तो तुम्हारे अन्न-जल की व्यवस्था नहीं कर सकता।

मायावती

तो क्या ?

राधाचरण

इसलिये कि वह अपनी ही व्यवस्था नहीं कर सकता और फिर उसे यह मालूम भी कैसे होगा कि उसे कोई प्रेत दुःख दे रहा है ?

प्रकाशचन्द्र

अगर तुम मुझे प्रेम करती थीं तो...(गंभीर होकर) पाँच वर्ष बीत गया लेकिन...

मायावती

लेकिन तुमने कभी कोई इच्छा प्रकट नहीं की....

राधाचरण

तुम इस स्त्री को...मायावती को क्यों छोड़ रहे हो ?

प्रकाशचन्द्र

इस लिये कि तुम्हारे भीतर कभी वह इच्छा पैदा नहीं हुई जिसका आकर्षण मेरे मन, मेरे शरीर पर पहुँचता। यों तो तुमने मेरे साथ विवाह भी किया था।

राधाचरण

तो उस पर असर नहीं होता ?

मायावती

मैंने...किसी शारीरिक सुख के लिये नहीं—केवल तुम्हारे साथ रहने [illegible] विवाह किया था। तुम्हारी सेवा में अपने को भूल जाने का विचार मेरा था। मैं समझती थी इस प्रकार मेरा स्त्रीत्व बिलकुल निष्फल न जायगा। (कुछ सोचने लगती है)

राधाचरण

वह स्त्री भी एक समस्या है। न तो तुम उसे उस जीवन में अपने वश में कर सके और न इस जीवन में। तुम्हारे लिए वह सदैव अजेय रही। मेरे लिये पूछ रहे हो? मैंने तो उसे क्षमा कर दिया। वह यहीं मेरे ही घर में एक दूसरे पुरुष के साथ रह रही है लेकिन मैं उसके लिये कोई भी अड़चन पैदा करना नहीं चाहता। मैं हत्यारा जो हूँ। मुझे स्त्री और घर की जरूरत नहीं है। मैं इस योग्य नहीं हूँ कि किसी मनुष्य के संसार में रह सकूँ।

मायावती

क्या सोच रहे हो ?

प्रकाशचन्द्र

यही कि मैं क्या करूँ? (एक दूसरे की ओर देखने लगते हैं)

राधाचरण

देखो, मैं यहाँ न तो उसके लिये आया और न इस घर के लिये। मैं तो केवल इसलिये आया कि यह जगह (दो क़दम पीछे हटकर) यहीं तुम्हें गोली लगी थी—देख लूँ। यह पेड़ देख लूँ। साथ ही साथ यह भी आशा थी कि शायद तुम्हें भी देख लूँ। लड़कपन में सुना था कि जो स्वाभाविक मृत्यु नहीं मरते—जिनकी अकाल मृत्यु होती है, वे भूत होकर कहीं वहीं रहते हैं जहाँ कि उनकी मृत्यु होती है। कालेपानी में मेरी आँखों के सामने यह पेड़, यह धरती और तुम्हारा यहाँ गिरकर छटपटाना आ जाया करता था। वहाँ का अंग्रेज़ अफ़सर मेरी अंग्रेजी का कायल था। मेरा काम था क़ैदियों के काम का हिसाब रखना। लिखते ही लिखते मैं कभी कभी इन्हीं विचारों में डूब जाता था—वह हँस कर कहता था अपनी प्रेमिका की याद कर रहे हो?

मायावती

(ऊँची साँस ले कर) तुम्हारा काम तो वही है जो ईश्वर का है। उसने अपनी माया का जगत बना दिया। तुम भी अपना बना रहे हो। उसकी कोई अपनी इच्छा नहीं है, उसका कोई अपना व्यक्तित्व नहीं है, तुम भी अपनी इच्छा अपना व्यक्तित्व मिटा डालो। वह अपने संसार में सर्वत्र सम-रूप से व्यक्त है– तुम भी अपने जगत में व्यक्त हो उठो। तुम्हें और क्या चाहिये ?

(प्रकाशचन्द्र किसी गहरी चिन्ता में पड़ जाता है। मायावती नीचे की ओर देखने लगती है।)

राधाचरण

मेरे घर मे परदादा की लिखी एक तन्त्र की पुस्तक थी। उसके बारे में घरवाले कहते थे कि उसमें ऐसी बातें लिखी थीं कि जिनसे प्रेत को वश में किया जा सकता था। लोगों की बीमारी अच्छी की जा सकती थी। पृथ्वी से धन निकाला जा सकता था। कोई कितनी ही दूरी पर हो उसको सन्देश भेजा जा सकता था और जिस किसी से ही

इच्छित कार्य कराया जा सकता था। लड़कपन में इस पुस्तक के लिये—उसकी जानकारी के लिये तो मैं वड़ा उत्सुक था। उसके विचित्र चमत्कार मेरे मन में वैठ गये थे। लेकिन उस समय तो उसे छूने का भी अवसर मुझे नहीं था। लोगों की यह धारणा थी कि उसे छू देने वाला भी बीमार पड़ जायगा।

प्रकाशचन्द्र

तो मैं यहीं क्यों रहूँ ? तुम्हारे साथ किसी तरह का विशेष सम्बन्ध क्यों रहे ?

मायावती

छोड़ सकते हो यहाँ का रहना और मुझे भी। मैं तो केवल तुम्हारी सेवा, तुम्हारे उद्देश्य में तुम्हारी सहायता रूप में रहना चाहती थी। जिस दिन तुम अपनी मनुष्यता छोड़ कर देवत्व की ओर बढ़ो मैं स्वतः छूट जाऊँगी। इसके लिये कोई आयोजन नहीं करना पड़ेगा।

(प्रकाशचन्द्र ऊपर की ओर मुँह करके लेट रहता है। मायावती उसके दोनों पैर अपनी गोद में रखकर धीरे धीरे दवाने लगती है।)

राधाचरण

मैं ज्यों-ज्यों अंग्रेज़ी पढ़ता गया, उस पुस्तक के विषय में मेरे विचार बदलते गये। विलायत में तो जब कभी उस पुस्तक की याद पड़ती थी, मैं अपनी मूर्खता पर मुस्करा पड़ता था। मेरी बुद्धि कहती थी वह पुस्तक और उसके सम्बन्ध की सभी बातें नितान्त असत्य हैं—असम्भव...हो नहीं सकता लेकिन मेरे मन में उसके प्रति कौतूहल किसी न किसी रूप में बराबर बना रहा।

प्रकाशचंद्र

(उसी तरह लेटे हुए) माया...

मायावती

हाँ...

प्रकाशचंद्र

मुझे ऐसा...

मायावती

हाँ, कहो...

प्रकाशचंद्र

मुझे मालूम होता है, जैसे मेरा सारा जीवन भ्रम और संदेह का है) एकाएक चुप हो जाता है)

राधाचरण

मैंने जब यह मकान बनवाया, पुराने घर की और सब चीज़ें तो पड़ोसियों में बाँट दीं, केवल वह पुस्तक...

मायावती

कहो न !

प्रकाशचंद्र

लिख तो मैं बहुत-कुछ जाता हूँ, कभी-कभी अपने लिखने पर—अपनी सफलता पर विस्मय भी होता है, लेकिन मानता शायद मैं कुछ नहीं। वास्तव में, न तो मेरा कोई बड़ा उद्देश्य है और न मैं अपने प्रति ही ईमानदार हूँ।

राधाचरण

एक पंडित था। झाड़-फूँक का काम भी कुछ करता था। इस पुस्तक को माँगता ही रह गया। मैंने उसे दे देने को कहा भी, लेकिन तब भी उसका मोह मैं नहीं छोड़ सका और कोई झूठा बहाना निकाल कर बात टाल गया। लेकिन मैं सभ्य आदमी उस तरह की पुस्तक अपने घर में तो रख

नहीं सकता था। शायद कभी कोई मित्र देख लेता और मेरी हँसी होती। इसलिए (एक ओर आगे बढ़ कर) यहीं जो यह गढ़ा है, इसी जगह काठ की पिटारी में बंद करके मैंने उसे गाढ़ दिया।

मायावती

जीवन में ऐसी विषमताएँ प्रायः आ ही जाती है। इसके विकास की कोई निश्चित सड़क नहीं है। संभव है...

प्रकाशचंद्र

क्या ?

मायावती

मनुष्य के भीतर-बाहर, सब कहीं ऐसी बातें हैं जिनका न होना...लेकिन वे हो जाया करती हैं। कदाचित्... (चुप हो जाती है)।

राधाचरण

अब की वार जब वहाँ से लौट कर आया।

प्रकाशचंद्र

तब मनुष्य की आशा क्या है ?

मायावती

ईश्वर का विश्वास ! मनुष्य अपने को उसके भरोसे छोड़ दे ।

राधाचरण

यहाँ आया, तब उस पुस्तक की याद आई ।

प्रकाशचंद्र

लेकिन इस ओर प्रवृत्ति जो नहीं होती...

मायावती

विशेषतः इस युग में । अब तो मनुष्य का सब से बड़ा बल सब से बड़ा भरोसा संदेह हो रहा है ।

राधाचरण

इतने दिनों का कौतूहल एकाएक जाग उठा ।

प्रकाशचंद्र

लेकिन...

मायावती

हाँ...

प्रकाशचंद्र

यही कि ऐसा है क्यों ? क्या मनुष्य का स्वभाव बदल गया ।

मायावती

यह तो है ही। संस्कार बदल जाने से स्वभाव तो बदल ही जाता है। मनुष्य का संस्कार जब तक नहीं बिगड़ता, उससे कोई बुराई होती नहीं। इस स्वतंत्र युग के स्वतंत्र वायुमंडल में मनुष्य के सभी बंधन टूट गए। बंधन टूट जाने पर पशु जैसी मनमानी करने लगता है, मनुष्य भी वही कर रहा है और उसी का नाम है शिक्षा, सभ्यता और स्वतंत्रता।

राधाचरण

इधर दो महीने मेरे उसी पुस्तक के अभ्यास में बीत गए। मैं तुम्हें देख रहा हूँ। तुम्हारी बातें सुन रहा हूँ।

प्रकाशचंद्र

तब...

मायावती

उँह, तुम इस चिंता में न पड़ो!

प्रकाशचंद्र

मैंने कहा तो—मैं अपने प्रति भी ईमानदार नहीं रहा।

मायावती

मैं तो नहीं समझती...

प्रकाशचंद्र

मैंने भी विवाह किया था......

मायावती

ऐं...

प्रकाशचंद्र

हाँ जी उस समय मैं बहुत छोटा था......
बचपन में......

[राधाचरण वहीं पेड़ के पास बैठ जाता है। पेड़ की कई डालें एक साथ हिल पड़ती हैं]

मायावती

और स्त्री...

प्रकाशचंद्र

अभी जीवित है। मैं कल्पना में जैसी स्त्री चाहता, वैसी नहीं, गँवार, कुरूप...लेकिन अब...

मायावती

हाँ...

प्रकाशचंद्र

हम दोनों का परिचय किसी बुरे महूर्त में हुआ था...

मायावती

शायद...

प्रकाशचंद्र

अंत में हम लोग सुखी नहीं हो सके...... ।

मायावती

मैं तो सुखी रही......इससे अधिक मैं कुछ और चाहती ही नहीं थी ।

प्रकाशचंद्र

लेकिन (मुसकरा कर) मेरी तो गंगा के किनारे भी प्यास न बुझी ! मैं इसे अपना सुख कहूँ या दुख... ?

मायावती

लेकिन उसके लिए कोई रोक तो नहीं थी ।

प्रकाशचंद्र

मेरी आत्मा में कभी उस तरह का आंदोलन नहीं हुआ, तुम्हारे साथ रहते हुए भी जैसे मैं

निर्वासित रहा। मेरा वह सारा अभाव, मेरी वह सभी अतृप्ति फूट कर मेरे साहित्य में बह गई है और (कुछ सोचकर) कदाचित् राघवशरण का कहना सच है कि मैंने अपने अमरत्व और नरक को स्वर्ग बना लिया है। मेरा यह दंभ कि कला—जिसका मतलब मेरी अपनी कला से था--योगमाया है सचमुच उग्र है।

मायावती

लेकिन वह उतना न होना—हम दोनों का साथ रह कर बच निकलना हमारे जीवन, हमारी आशा के लिए महान् नहीं हुआ है? (उत्तेजना में) हम उससे बड़े नहीं हुए जो उस दशा में रहते? मन की चाह का मर जाना ही तो......

प्रकाशचंद्र

क्या है?

मायावती

विकार का बंधन टूट जाय, हमारी मनुष्यता की कमी मिट जाय, उसके बाद देवत्व हमारे लिए है।

प्रकाशचंद्र

मायाविनी स्त्री...(उसकी ओर ध्यान से देखने लगता है)

मायावती

(मुसकरा कर) पुरुष अब अपना विष नहीं सम्हाल सकता। अच्छा तो आने दो, स्त्री उसे पीकर तुम्हें मरने से बचा लेगी। और शायद अब तुम्हारी बीमारी भी छूट जाएगी।

प्रकाशचंद्र

मेरी बीमारी.. हूँ ..(गंभीर होकर) यही तुम्हारी देन है। तुमने दिया भी तो यही।

मायावती

मेरे पास और था ही क्या ? मैं तुम्हें यहाँ तक लिवा लाई—पत्नीत्व के सुख के लिए नहीं-उसका अधिकार मुझे नहीं था। जिसके कारण एक पुरुष की हत्या हुई और दूसरे को कालेपानी की सजा—वह पत्नीत्व की कल्पना कैसे करती ? मुझे तो अपने लिए एक प्रयोग करना था और उसी लिए तुम्हें......

प्रकाशचंद्र

प्रयोग करने के लिए मुझे...और कोई नहीं मिला ?

मायावती

तुम्हारी तबियत का, तुम्हारी प्रकृति का नहीं मिला—और किसे अवकाश था ?

प्रकाशचंद्र

लेकिन तुमने यह कैसे समझ लिया कि मुझे अवकाश था ?

मायावती

तुम स्वयं चले आये। मैंने तुम्हारे ऊपर कोई आकर्षण नहीं किया था। तुम अपनी अपढ़, गँवार, कुरूप स्त्री से असंतुष्ट रहे। तुम कल्पना में निरंतर कोई सुन्दर, शिक्षित, संस्कृत-स्त्री चाहते थे, जिसके साथ तुम रहते; जिसके साथ वायु सेवन के बहाने मैदान में, नदी किनारे, पर्वत पर घूमते; इसमें मेरा नहीं, तुम्हारी प्रकृति का दोष है। [गंभीर स्वर में हाथ हिला कर और गर्दन घुमाकर] मैं अपने लिए—अपने प्रयोग के लिए जैसा चाहती थी—ठीक वैसे तुम मिले !

प्रकाशचन्द्र

ओह, विश्वासघात...।

मायावती

बिलकुल नहीं...।

प्रकाशचन्द्र

तुम यहाँ तक गिर गई हो ?

मायावती

कहाँ तक जी ?

प्रकाशचन्द्र

तुमने जान बूझकर मेरे साथ धोखा किया और तुम्हें इसका पश्चात्ताप भी नहीं है। तुम्हारी आत्मा यहाँ तक...।

मायावती

हाँ...हाँ, आत्मा का नाम न लेना...।

प्रकाशचन्द्र

[उद्वेग के स्वर में सिर हिलाता हुआ] क्यों नहीं... क्यों...नहीं क्यों ?

मायावती

[गंभीर होकर] इस...लिए कि वह इतनी हलकी

चीज नहीं है। जिस चीज़ की तुम मुझसे आशा करते थे और शायद जिसके लिए तुम्हें निराश होना पड़ा, वह तुम्हारी आत्मा की नहीं... तुम्हारे रक्त-मांस की थी। तुम विचारों में जितने सुन्दर हो...अगर तुम में उतनी भयंकर वासना न होती, अगर तुम भी वही नहीं चाहते, जो कोई भी पुरुष जवानी में चाहता है, तो तुम देवता होते। [एकाएक चुप होजाती है] और मैं इसी आशा में थी।

प्रकाशचन्द्र

कैसी आशा...जिसे ..।

मायावती

यही कि तुम्हारे भीतर पुरुषत्व देखूँगी !

प्रकाशचन्द्र

वह तो शायद तुमने देख लिया ?

मायावती

हाँ देख तो लिया और मुझे निराश होना पड़ा। उधर पाँच वर्ष तक जिस मोह-स्वप्न में पड़ी थी, वह एकाएक टूट गया। लेकिन—[कुछ सोचती हुई] मुझे

कोई चिंता नहीं। मेरा प्रयोग पूरा होगया। परिणाम निकल गया और इसी की ज़रूरत थी।

प्रकाशचन्द्र

अच्छा हाँ, मैं भी सुनलूं वह परिणाम, जिसके लिए तुमने मेरा जीवन बिगाड़ दिया।

मायावती

छीः, रो क्यों रहे हो ? तुम्हारी आत्मा का विस्तार होना चाहिए था आकाश की तरह, और उसकी गंभीरता समुद्र के समान। तुम जीवन की कल्पना और उसकी अनुभूति करते हो, संसार के सामने तो तुम्हारा यह दावा है कि तुम जीवन के रहस्य समझ चुके हो और अब औरों को समझा रहे हो—संसार की अंधी आँखों में अनुभूति का प्रकाश भर रहे हो और रो रहे हो केवल अपने जीवन के लिए। अपने जीवन को मिटा देते, कम से कम संसार से तुम्हारी जो भिन्नता है उसे मिटा देते और तुम इस बात के अधिकारी होते कि सृष्टि के समानांतर तुम्हारी सृष्टि भी चलती रहे। और फिर

तुम्हारा जीवन बिगड़ा भी कहाँ ? लालसा की पूर्ति तो मृत्यु है।

प्रकाशचन्द्र

और तुम्हारे प्रयोग का परिणाम !

मायावती

[मुसकरा कर] सुनोगे !

प्रकाशचन्द्र

बस कहती चलो...।

मायवाती

[सिर हिलाकर] समझोगे नहीं।

प्रकाशचन्द्र

संभव है। लेकिन तुम्हारे शब्द के साथ जो वज्र चल रहा है, उससे मेरे संदेह और भ्रम का पर्वत तो ढह जाएगा।

मायावती

[उसकी ओर ध्यान से देखती हुई] पुरुषत्व की रक्षा पुरुष के नहीं [आगे की ओर सिर बढ़ा कर] स्त्री के आधीन है। हम इसीलिए पैदा हुई थीं—हमें पैदा करने में प्रकृति का यही मतलब है।

प्रकाशचन्द्र

[चौंक कर खड़ा होता हुआ] तो तुमने मेरे पुरुषत्व की रक्षा की है ? ऐं...

मायावती

[मुसकरा कर] इसमें भी संदेह है !

प्रकाशचन्द्र

[कुछ सोचता हुआ] नहीं... तुम्हारा कहना कदाचित्...

मायावती

नहीं जी...यह तुम्हारा नहीं, मेरा काम था कि तुम्हारा......मैं सावधान रही......जहाँ कहीं पुरुषत्व का पतन होगा, उसकी जिम्मेदारी किसी न किसी रूप में स्त्री पर होगी । शायद तुम समझते हो मैंने तुम्हें प्रेम नहीं किया, तुम्हारे साथ शुष्क विनोद करती रही ।

प्रकाशचन्द्र

संभव है बिलकुल ऐसा न हो, लेकिन तुम अपनी नीरस सेवा को, बीमारी में कभी-कभी सारी रात मेरी चारपाई पर बैठे रहने को प्रेम कह रही हो ?

मायावती

अच्छा तो मैं अपने साथ तुम्हें भी न ले डूबी। मैंने बुरा किया—यही न। यह तर्क का विषय नहीं है। नए विचारों और इस युग की उच्छृंखलता में मैं संस्कार-भ्रष्ट होचुकी थी—उसी संस्कार को फिर से जिलाने के लिए मैंने तुम्हारा साथ किया था। स्त्रीत्व का आदर्श और विकास अपनी भिन्नता मिटा कर पुरुष में लय होजाना है। इसी आदर्श की प्राप्ति के लिए मैंने यह आध्यात्मिक प्रयोग किया था। अगर तुम सोचो तो, पहले से बुरे नहीं हुए—जो थे अब भी हो, या कुछ अंशों में उससे भी महान् होगए हो। खतरे के दिन निकल गए। अगर चाहो पूर्ण पुरुष—पूर्ण योगी हो सकते हो। प्रकृति के उन्माद का रुक जाना...मृत्यु का रुक जाना है।

प्रकाशचन्द्र

[गंभीर होकर] माया ..मैं चरित्रों का निर्माण करता था और समझता था कि मेरे चरित्र सत्य और स्वाभाविक हैं। लेकिन, जब मैं तुम्हें नहीं

समझ सका, तो। कहाँ तक मेरे चरित्र...तुमने मुझे बचा लिया, इसमें संदेह नहीं और मैं अब न लिखूंगा।

मायावती

(मुसकराकर) ऐसा नहीं। अब तो तुम इस योग्य हुए हो कि और लिखो। जिस अंश तक तुम सत्य और स्वाभाविक थे, उसी अंश तक तुम्हारे अब तक के कल्पित चरित्र भी सत्य और स्वाभाविक हैं। तुम्हारी क्षमता—अगर तुम अपने को समझ जाओ तो अब और बढ़ गई। तुम्हारी लेखनी से शक्ति और सौंदर्य का उद्बोधन होगा, उससे संसार चकित हो उठेगा।

प्रकाशचंद्र

तो मुझे अब क्या करना होगा?

मायावती

मुझसे पूछ रहे हो? मृग की तरह मृग-मद खोजोगे क्या? वह तो तुम्हारे पास है। अपने को भूलकर विश्यमय हो उठो। तुम्हारे रचयिता होने में किसे संदेह होगा, अपने बंधनों को तोड़ दो—अपनी सीमाओं को पार कर जाओ। इस देश

को उनकी जरूरत नहीं है, जो पश्चिम के प्रवृत्ति-वादियों की नकल कर वासना और विकार की प्रदर्शनी खोल रहे हैं—जरूरत है उनकी जो अपनी आत्मा, अपने जीवन के साथ प्रयोग कर विश्वात्मा और विश्व-जीवन का रहस्य खोल सकें, जो हमारी उस शक्ति—उस सौंदर्य को जीवित करें, जो मर चुका है या मर रहा है, जो हमारी चेतना को जगा कर हमारे जीवन और जगत् को रसमय करें।

(प्रकाशचंद्र गंभीर होकर उसकी ओर देखने लगता है)

प्रकाशचंद्र

(विस्मय के स्वर में) तुम वही हो या नहीं !

मायावती

(हँसती हुई) हम लोग वही कभी नहीं रहते। पाँच वर्ष पहले हम लोग क्या थे और आज क्या हैं ? हमारे भीतर परिवर्तन का अज्ञात चक्र निरंतर चलता रहता है। हम लोग चाहते तो नहीं, लेकिन हम नियति के खिलौने इससे बच नहीं सकते।

प्रकाशचंद्र

लेकिन तुम्हारा यह प्रयोग बिना विवाह के भी तो चल जाता ?

मायावती

नहीं। तुम परदेशी की तरह मेरे साथ रहते। तुम्हारी आत्मा का मेरी आत्मा के साथ सान्निध्य न हो पाता। तुम मुझ से सदैव सावधान रहते, सचेत रहते। तुम अपने को मुझे उस तरह न सौंप देते जिस तरह तुमने सौंप दिया। पुरुष की सावधानी विद्रोह पैदा करती है, लेकिन स्त्री की सावधानी उस बंधन को, जिस में विश्व की दो भिन्न समस्याएँ, दो भिन्न विधान, जिनकी सृष्टि एक दूसरे के विरोधी उपकरणों से होती है, मिल कर एक हो जाते हैं, और भी दृढ़ करती है। सावधानी स्त्री के लिए है पुरुष के लिए नहीं।

प्रकाशचंद्र

(कुछ सोचता हुआ) तो......

मायावती

हाँ......

प्रकाशचंद्र

तुम्हारा प्रयोग पूरा हो गया। अब तो तुम्हें मेरी ज़रूरत न होगी।

मायावती

तुम्हारी जरुरत तो मुझे जीवन भर रहती लेकिन, इस बीच में इतनी बातें हो गईं। तुम सावधान हो गए और अब उस दशा में.....

प्रकाशचंद्र

क्या?

मायावती

हम लोग अब एक साथ नहीं रह सकते। हमारा विवेक कहेगा कि कोई हर्ज नहीं। सब कुछ समझ जाने पर साथ रहना कोई बुरा नहीं है। यह तो एक प्रकार का संयम, एक प्रकार की साधना होगी— लेकिन हमारी मनुष्यता हमें बेचैन करती रहेगी। हम दोनों का इतिहास कुछ ऐसा है.....तुम तो अपना व्यक्तित्व मिटा कर संसार के विराट् जीवन और विराट् व्यक्तित्व में मिल जाओगे। तुम्हारा इतिहास

भी छूट जायगा। लेकिन मेरा इतिहास ! मेरे लिए तो अब कोई आशा नहीं ?

प्रकाशचंद्र

तो मैं कल यहाँ से चला जाऊँ न !

मायावती

मुझे छोड़ कर !

प्रकाशचंद्र

किया क्या जाय ? और अब...

मायावती

तुम्हारे मन में मेरे प्रति कोई विकार तो......

प्रकाशचंद्र

विकार तो संसार के साथ है। निर्विकार की कल्पना मैं नहीं करता।

मायावती

तो तुम मुझे क्षमा नहीं करोगे ?

प्रकाशचंद्र

शब्दों का विश्वास अगर तुम कर सको तो मैं तुम्हें क्षमा कर दूँ। लेकिन, किस बात केलिए ? तुमने कोई बुराई नहीं की।

मायावती

शायद ! मेरे भीतर जैसे कोई प्रेरित कर रहा है कि मैं तुमसे क्षमा माँगलूँ। स्त्री पुरुष से क्षमा माँग ले, कदाचित् ऐसा ही विधान है।

(प्रकाशचंद्र उसकी ओर ध्यान से देखने लगता है। मायावती खड़ी होती है और कुछ सोचती हुई कमरे में इधर-उधर टहलने लगती है। राधाचरण, पेड़ के नीचे, उठकर थोड़ी देर चुपचाप खड़ा रहता है। पेड़ की डाल हिलने लगती है। राधाचरण मकान की ओर चल पड़ता है और कमरे के नीचे प्रकाशचंद्र के ठीक सामने आ जाता है।)

प्रकाशचंद्र

(भय के स्वर में) आगया...आगया वही...वही (उठकर भागना चाहता है । राधाचरण कमरे के भीतर प्रवेश करता है। मायावती घूम कर उसकी ओर देखती है। प्रकाशचंद्र थोड़ी दूर पर भय से काँपता हुआ बैठ जाता है। मायावती तेज़ी से उसके पास पहुँचती है।)

राधाचरण—दूर हट स्त्री, छूना मत उसे।

मायावती

तुमने तो मुझ से कहा था कि तुम यहाँ कभी न आओगे।

राधाचरण

तो मैं तुम्हारे लिए नहीं...तुम्हारे इस रोगी के लिए आया हूँ। तुम्हारे लिए प्रायश्चित इसे करना पड़ रहा है। इसका अपराध ?

मायावती

और मेरा अपराध ? तुम कालेपानी से लौटने पर जिस दिन यहाँ आये, उसी दिन मैंने तुम से कहा था कि तुम अपना मकान ले लो। मैं कहीं और चली जाऊँगी। उस दिन तो...

राधाचरण

सो तो ठीक है। लेकिन मैं आज भी तुमसे मकान लेने नहीं आया हूँ, और न मैं उन रुपयों के लिए कुछ कहता हूँ...मैंने अपना सब कुछ तुम्हें दे दिया था फिर लौटाने के लिये नहीं। मैं तुम से किसी तरह का कोई हिसाब नहीं माँगता।

मायावती

तब...

राधाचरण

मुझे अपने मित्र के लिए इस पेड़ तक आना

होगा। कभी यहाँ रहना होगा। [प्रकाश चन्द्र की ओर संकेत करके] आज तो इस रोगी को मैं अच्छा कर देता हूँ। लेकिन, इसका यहाँ रहना ठीक नहीं है। जब मेरे मित्र को अवसर मिलेगा, जब कभी उससे भेंट हो जाएगी, यह बीमार पड़ जाएगा।

मायावती

मैंने तो नहीं कहा था कि तुम अपने मित्र की हत्या करो।

राधाचरण

तुम ने तो मुझ से यह भी नहीं कहा था कि मैं तुम से प्रेम करूँ। प्रायः ऐसी बातें हो जाया करती हैं.. जिनका न होना अच्छा होता। इसी तरह प्रेम भी हो गया और वह हत्या भी हो गई। जो हो गया तर्क से नहीं मिट सकता। उसका फल भोगना होगा—उसके लिए प्रायश्चित करना होगा। उसका फल भोगना चाहिए तुम्हें और मुझे ..उसके लिए प्रायश्चित करना चाहिये तुम्हें और मुझे [प्रकाशचन्द्र की ओर सं॰त कर] लेकिन इसने क्या अपराध किया ? यह क्यं उसका फल भोगे ?

मायावती

इसका उत्तर अपने मित्र से, अपने प्रेत से पूछो ?

राधाचरण

पूछ लिया है और इसी लिए तो यहाँ आया हूँ कि इसे बचा लूँ । और तुम...तुम अपना फल भोगने के लिए, अपने प्रायश्चित के लिए तैयार रहो ! ज्ञान की बातें कर्मफल नहीं रोक सकतीं ।

[मायावती धरती की ओर देखने लगती है । राधाचरण प्रकाशचन्द्र के सिर पर हाथ रखता है उसका कंधा पकड़ कर हिलाने लगता है ।] इसे तो...मूर्छा...[राधाचरण उसके शरीर पर इधर-उधर हाथ फेरता है । थोड़ी देर के बाद कुछ अर्थहीन और बेमेल शब्दों का उच्चारण करता है । थोड़ी देर तक काँपता रहता है] प्रकाशचन्द्र (प्रकाशचन्द्र आँखें खोलता है और भय से उसकी ओर देखता है] डरो न, इस तरह न देखो...मुझे नहीं पहचान रहे हो क्या ? तुम मेरी बाँसुरी सुन चुके हो । (बाँसुरी बजाने लगता है । प्रकाशचन्द्र सचेत हो कर बैठ जाता है । राघवचरण का प्रवेश)

राधाचरण

मुझे देखकर डर गए ।

प्रकाशचन्द्र

आपको नहीं...मनुष्य की उस भयानक मूर्ति को...

राधाचरण

उसे कभी और भी देख चुके हो ?

प्रकाशचन्द्र

आज ही रात को ऊपर सोया था...वह भयानक मूर्ति...ओह ?

राधाचरण

इस तरह डरने की ज़रूरत नहीं है। वह सामने जो पेड़ है, देख रहे हो ?

प्रकाशचन्द्र

हाँ...

राधाचरण

उसी पेड़ के नीचे एक मनुष्य की हत्या हुई थी।

प्रकाशचन्द्र

जानता हूँ...

राधाचरण

[विस्मय में] जानते हो ? [राघवशरण और

मायावती की ओर बारी-बारी देख कर] इस युग में सभ्यता और बुद्धि के नाम पर कुछ बातें अंध-विश्वास कह कर छोड़ दी गई हैं—प्रेतात्माओं की सत्ता अब नहीं मानी जाती। इसका परिमाण यह हुआ है कि मनुष्य का जीवन-बल तो गिरता जा ही रहा है, उसके नैतिक बंधन भी टूट गए हैं। हत्या साधारण और सुगम हो गई है। क़ानून से बचने का उपाय हो, फिर तो हत्या में कोई अड़चन नहीं, लेकिन इसका एक ईश्वरी विधान भी है। जो मारा जाता है, जिसकी स्वाभाविक मृत्यु नहीं होती, देह छूट जाने पर भी उसके दैहिक संस्कार नहीं छूटते प्रेत रूप में उसे इसी धरती पर अपने उन्हीं संबन्धियों के संसर्ग में रहना पड़ता है।

प्रकाशचन्द्र

तो मैं क्यों...

राघवशरण

अब वह तुम्हें प्रभावित नहीं करेगा। मैं इस यत्न में हूँ।

राधाचरण

कभी नहीं। यह तो एक प्रकार का मानसिक विकार है।

राघवशरण

इसके भीतर तुम्हें ईश्वरीय न्याय नहीं देख पड़ता ! तुम सभ्य लोग जो इस मानसिक विकार को नहीं मानते...मानसिक बीमारियों के शिकार भी तुम्हीं होते हो; तुम भी उस फल से—उस प्रायश्चित्त से नहीं बचते। स्थूल जगत् के आगे किस चीज़ की सत्ता तुम मानते हो—ईश्वर भी तो अब तुम्हारे लिए संदेह...तुम्हारी प्रकृत्ति के अनुकूल जो चीज़ नहीं होती उसे तुम झट अस्वीकार कर देते हो और तर्क में जीत जाते हो लेकिन, तुम्हारा तर्क सत्य नहीं मिटाएगा, प्रकाश !

प्रकाशचन्द्र

जी...

राधाचरण

अब तुम बीमार नहीं पड़ोगे। इस स्त्री का संसर्ग छोड़ देना।

मायावती

तुम्हारा प्रेत इस स्त्री को क्यों नहीं...

राधाचरण

यह स्त्री फल तो भोग लेगी लेकिन अपने प्रेत को नहीं मानेगी। पाँच वर्ष के भीतर इसने कभी उसके निमित्त एक बूंद जल भी...

[राधाचरण का प्रस्थान]

[राघवशरण, प्रकाशचन्द्र और मायावती कौतूहल और उद्वेग में एक दूसरे की ओर देखने लगते हैं]

[वही मकान। वही कमरा। कमरे में सभी चीजें उसी तरह ज्यों-की त्यों पड़ी हैं। दीपक उसी तरह धीमी लौ से जल रहा है। चाँद मकान के पीछे की ओर चला गया है और इसलिए सामने के पेड़ पर तो चाँदनी पड़ रही है, लेकिन पेड़ और मकान के बीच की धरती पर अँधेरी छाई हुई है। ध्यान से देखने पर किसी तरह किसी चीज़ का आभास मालूम पड़ता है। प्रकाशचन्द्र काठ की चौकी पर कुछ लिख रहा है। दीपक का प्रकाश मंद पड़ता जा रहा है, लेकिन वह इतना तल्लीन है, उसकी लेखनी इतने वेग से चल रही है कि उसे दीपक की, और साथ ही सारे बाहरी जगत् की जैसे कोई धारणा ही नहीं है। उसकी आकृति पर कभी तो गंभीरता और कभी मुसकुराहट-सी

व्यक्त होती है। लिखते ही लिखते लेखनी के ऊपरी भाग पर सिर टेक कर जैसे कुछ सोचने लगता है।]

(मायावती का प्रवेश। वह उसके पास जा कर खड़ी होती है। प्रकाशचन्द्र उसी तरह निश्चेष्ट बैठा है। थोड़ी देर तक कमरे में सन्नाटा रहता है। मायावती झुक कर जैसे उसके सिर पर हाथ रखना चाहती है, लेकिन फिर सम्हल कर खड़ी हो जाती है।)

मायावती

बस एक पहर रात बाकी है और अब न सोने का मतलब है बीमार पड़ना।

प्रकाशचन्द्र

तो मेरी चिंता अभी तुम न छोड़ोगी ? (उसकी ओर एकटक देखने लगता है)

मायावती

(मुसकुराकर) आज ही की रात तो। कल तो शायद...

प्रकाशचन्द्र

और आज ही की रात मुझे लिखना भी था। कल तो शायद...(चौकी पर झुक कर लिखे हुए पत्रों को इधर-उधर करके देखने लगता है)

मायावती

तो तुम्हारा लिखना क्यों बन्द होगा ?

प्रकाशचन्द्र

मुझे मनुष्य जो बनना है, माया। यह सब क्यों हुआ ? इसी लिए न कि मेरी मनुष्यता......

मायावती

अच्छा...

प्रकाशचन्द्र

कुछ नहीं...कुछ नहीं.. कुछ नहीं। जो लौट नहीं सकता...जो बीत गया, उसके लिए अब...

मायावती

आज ही की रात...(गंभीर होकर कुछ सोचने लगती है)

प्रकाशचन्द्र

(संदेह से उसकी ओर देखता हुआ) तुम्हारा स्वर भारी क्यों हो रहा है ?

मायावती

मेरा बोझ जो बढ़ गया है। आज की रात...कल तो अब तक...

प्रकाशचंद्र

क्या होगा ?

मायावती

मेरा दूसरा जन्म...और तुम्हारी चिन्ता शायद दूसरे जन्म में भी बनी रहेगी। (मुस- कराती हुई) तुम समझते हो तुम्हारी बीमारी का कारण मैं रही। हो सकता है और कदाचित् ऐसा है भी। लेकिन, मेरा प्रयोग...मेरा जो कुछ बिगड़ चुका था उसका सुधार ...मेरी सिद्धि तो मुझे मिल गई

प्रकाशचन्द्र

(उद्वेग के स्वर में) तुम करना क्या चाहती हो ?

मायावती

कुछ विशेष नहीं.. (हँसती हुई) वही जो होजाना चाहिए था और जिसका हो जाना...(एकाएक चुप होकर दरवाजे के बाहर निकल कर पेड़ और आकाश की ओर देखने लगती है)

प्रकाशचन्द्र

तुम मुझसे कुछ छिपा रही हो...इसमें संदेह नहीं।

मायावती

(आकाश की ओर देखती हुई) रात कितनी होगी ? अब तो शायद एक पहर भी नहीं है। वह कहानी याद है ?

प्रकाशचन्द्र

कौन-सी ?

मायावती

वही, जहाँ रानी डूबी थी. कमल का फूल खिल गया। राजा उसे तोड़ने के लिए ज्यों-ज्यों आगे बढ़ा कमल अथाह जल की ओर खिसकता गया। अंत में राजा भी डूब गया और फिर वहाँ एक की जगह दो फूल हो गए ? (हँसने लगती है)

प्रकाशचन्द्र

(गंभीर मुद्रा में) तुम पागल तो नहीं हो रही हो ?

मायावती

(हँसती हुई) उस फूल की...उस फूल की .. कल्पना करो न ? मेरे पागलपन में क्या है !

प्रकाशचन्द्र

हूँ...उस फूल की या तुम्हारे प्रयोग की... ?

मायावती

उस फूल में और मेरे प्रयोग में कोई अंतर नहीं है। दोनों एक ही चीज़ है, एक ही चीज़...मेरा प्रयोग भी तो उसी तरह का, उसी लिए था।

प्रकाशचन्द्र

किस तरह का ..?

मायावती

जैसा वह फूल था। उसका अभाव मिट गया। और मेरा भी...

प्रकाशचन्द्र

तुम्हारा अभाव भी मिट गया। किस तरह ?

मायावती

(हँसती हुई) तुम से विवाह जो किया था मैंने, और किस तरह...

प्रकाशचन्द्र

ओह! तो तुम उस विनोद को, उस खिलवाड़ को विवाह कहती हो। उस ईश्वर से भी तो डरो। तुम्हारा यह छल, तुम्हारी यह वंचना वह तो जानता है। उससे तो कुछ छिपा नहीं।

मायावती

हाँ, वह जानता है। और इसी के—केवल इसी के भरोसे तो मैं कह रही हूँ कि मैंने तुमसे विवाह किया था।

प्रकाशचन्द्र

लेकिन तुम्हारा विवाह पहले भी तो हो चुका था—

मायावती

नहीं...नहीं...वह तो एक तरह का ठेका था, जो कभी भी तोड़ा जा सकता था। विवाह जिसके टूटने का भय नहीं—जिसमें सारी जिन्दगी और सारे जगत् को बाँध लेने की क्षमता है, वह तो केवल तुम्हारे साथ हुआ था। तुम उसे अस्वीकार क्यों कर रहे हो? मेरे दूसरे जन्म की जो आशा है...जिसके सहारे मुझे इस जीवन से छुट्टी लेनी है... उसे न तोड़ो, प्रभु! यह तो जानते हो कि इस जन्म के संस्कारों के अनुरूप ही मेरा दूसरा जन्म होगा। यही मेरा सब से बड़ा संस्कार है। अगर यही छीन लोगे (सिर हिलाती हुई) हाँ, अगर यही छीन लोगे,

तो मेरी दरिद्रता कितनी भयावह होगी और मेरे उस दूसरे जन्म का आधार भी क्या होगा ?

(उसका शरीर काँपने लगता है। वह झुककर दरवाजे के पास दीवार पर सिर रख देती है)

प्रकाशचन्द्र

माया !

(माया उसी तरह निश्चेष्ट खड़ी रहती है) इधर आओ! मैं तुम्हें जितना ही समझना चाहता हूँ— तुम्हारा रहस्य मेरे लिए उतना ही गूढ़ होता जा रहा है। प्रलय और सृष्टि, जीवन और मरण, प्रकाश और अन्धकार, प्रेम और घृणा, जैसे सब कुछ एक हो रहा है। तुमने मुझे किस भूलभुलैयाँ में डाल दिया, माया !

(माया फिर भी उसी तरह खड़ी रहती है)

इधर देखो। तुम्हारे दूसरे जीवन का आधार, तुम्हारी इस जन्म की आशा बनी रहे। मुझ से जो कुछ चाहो, ले लो। मैंने तुमसे विवाह किया था— तुम मेरी स्त्री हो।

मायावती

(टूटते हुए शब्दों में) तो यह.. आ... ज... की रात......

प्रकाशचंद्र

क्या ?

मायावती

आज की रात मेरी सुहागरात है न ?

प्रकाशचन्द्र

अगर तुम चाहो...?

मायावती

(गंभीर होकर) अशीर्वाद दो, मेरा यह अधिकार आज की तरह सदैव बना रहे।

प्रकाशचन्द्र

अच्छा...

मायावती

(कुछ सोचती हुई) आज की रात...कल तो...

प्रकाशचन्द्र

अब कल...

मायावती

(हँसती हुई) कुछ नहीं। कल फिर सूर्य निकलेगा इतना ही निष्ठुर, इतना ही दाहक या कुछ सदय और शीतल...

प्रकाशचंद्र

तुम रह-रह कर...

मायावती

(आकाश की ओर देखती हुई) तारे सभी रहेंगे या कोई डूब जाएगा।

प्रकाशचंद्र

तुम मुझे...

मायावती

(जैसे होश में आकर) लोग कहते हैं कि ..

प्रकाशचंद्र

क्या कहते हैं लोग ?

मायावती

मनुष्य का जन्म केवल दुख उठाने के लिए होता है, और जब उसके सुख के दिन आते हैं, तब तो वह बुला लिया जाता है।

प्रकाशचंद्र

(उद्वेग के स्वर में) तुम यह सब कह क्या रही हो ?

मायावती

मैं नहीं कह रही हूँ। संसार में यही होता आया है। सब किसी का यही अनुभव है।

प्रकाशचंद्र

लेकिन आज ही क्यों यह रहस्य तुम्हारे भीतर जाग पड़ा है ?

मायावती

आज ही तो मेरी सुहागरात है ? मेरे भीतर मेरा संसार अँगड़ाई ले रहा है। आज की रात...और कल...। (हँसती हुई) तो तुम जैसे मुझ पर संदेह कर रहे हो ?

प्रकाशचंद्र

तुम्हारा लक्ष्य क्या है, तुम्हारे शब्द जैसे किसी निराशा में ..

मायावती

स्त्री के लक्ष्य पर भी कभी किसी पुरुष ने

विचार किया है ? (सिर हिलाती हुई) नहीं... नहीं...पुरुष कभी इतना सदय नहीं हुआ। स्त्री को या तो उसने रोते हुए देखा या हँसते हुए... स्त्री की कभी कोई अपनी समस्या हुई हो नहीं, तो फिर उसका अपना लक्ष्य क्या होता ?

प्रकाशचंद्र

लेकिन तुम्हें जिस बात का पश्चात्ताप है, जिसे तुम अपना सब कुछ बिगड़ जाना—अपना ध्वंस समझती हो, उसका कारण भी तो तुम्हारी अपनी समस्या थी...।

मायावती

हुआ तो ऐसी ही...लेकिन कारण तुम्हारे पुरुष-समाज की वह मनोवृत्ति थी, जिसमें स्त्री के लिए न तो कोई अधिकार था और न कोई कर्तव्य। इसी की—इसी की प्रतिक्रिया में मेरा सब कुछ बिगड़ गया और पता नहीं अभी और कितनी स्त्रियों का बिगड़ेगा...(हँसती हुई) और कुछ नहीं, तुम लोग इतना अधिकार भी तो हमारा छोड़ देते, जिसमें हमें तुम्हारी सेवा का—केवल सेवा का, अवसर भी मिलता।

प्रकाशचंद्र

लेकिन वह तो किसी ने नहीं छीन...

मायावती

(बात काट कर) वाह ! कितनी सफ़ाई से कहे देते हो। (सिर हिलाती हुई) वह अवसर, वह विश्वास, जिसमें हमारी आत्मा तुम्हारे चारों ओर चक्कर काटती होती, दूसरी चीज़ है और वह, जहाँ तुम्हारा संकेत, तुम्हारी धमकी, तुम्हारी डाँट-फटकार आ पड़े, दूसरी चीज़ है।

प्रकाशचंद्र

(गंभीर होकर) संभवतः। (मसनद के सहारे वहीं क़ालीन पर लेट रहता है और इधर-उधर करवट बदल कर देह मरोड़ने लगता है।)

मायावती

(उसके पास जाती हुई) देर तक बैठे रह गए। देह दुख रही है। (बैठ कर उसका पैर मलने लगती है)

प्रकाशचंद्र

(पैर खींचता हुआ) ना.. ...

मायावती

(आग्रह के स्वर में) क्यों जी...?

प्रकाशचंद्र

रहने दो।

मायावती

(मुसकराती हुई) तब तो तुमने मेरा वह अधिकार छीन लिया न ?

(प्रकाशचंद्र करवट बदल कर मसनद में मुँह छिपा लेता है। मायावती वहीं बैठी रहती है। थोड़ी देर तक सन्नाटा रहता है। बाहरी दरवाज़े से राघवशरण का प्रवेश। राघवशरण पल भर में कमरे में चारों ओर दृष्टि फेरता है फिर धीरे से आगे बढ़ कर मायावती का हाथ पकड़ कर बाहर चलने का संकेत करता है। मायावती उठती है और उसके साथ धीरे से बाहर निकल जाती है। प्रकाशचंद्र उसी तरह पड़ा है। राघवशरण और मायावती बाहर निकल कर एक ओर खड़े रहते हैं।)

राघवशरण

अपनी माया समेट लो ?

मायावती

किस लिए ?

राघवशरण

उसकी रक्षा के लिए। अन्यथा, वह बच नहीं

सकता। उसमें स्वतः इतना साहस और इतना विवेक तो है नहीं। नहीं तो...

मायावती

(गंभीर स्वर में) नहीं तो...अच्छा...

राघवशरण

प्रेम के मूल में ही कल्याण की भावना होनी चाहिए।

मायावती

यही तो आप नहीं समझ सके।

राघवशरण

क्या?

मायावती

मैंने न तो उन्हें कभी प्रेम किया और न करूँगी?

राघवशरण

(विस्मय के स्वर में) तब...?

मायावती

और उनके साहस और विवेक का भी आपको पता नहीं। आप तर्क में उन्हें हरा देते हैं लेकिन

विवेक का सम्बन्ध तर्क से नहीं, आचरण से है। और आज जब यह नाटक समाप्त हो रहा है, जब यह कहानी रुकना चाहती है, मुझे कहना पड़ता है, आपके विवेक और साहस का दंभ व्यर्थ है। आप स्वयं इतने बुरे रहे हैं कि दूसरों को उपदेश देने का आपको कोई अधिकार नहीं है। आपका साहस और आपका विवेक मैं तो जानती हूँ न ? और कोई जाने या न जाने।

राघवशरण

(असमंजस के स्वर में) मैं स्वयं बुरा रहा ?

मायावती

(गंभीर स्वर में) जी हाँ। आप बुरे रहे हैं बुरे... और जितने बुरे आप रहे हैं...आपने आदर्श का जो ढोंग बना रक्खा था .. (मुसकरा कर) आप की यह सारी चिन्ता उनके लिए तो नहीं...मेरे लिए थी। आपसे मैं तो सावधान रही—लेकिन उनके लिए—आप उनके हितू रहे हैं ? मैंने उन्हें कभी भी प्रेम नहीं किया। कम कम से आप इस भ्रम में तो न रहें।

राघवशरण

और मैं बुरा कैसे रहा ?

मायावती

जी ! आप यहाँ आने क्यों लगे ? किसने आप को निमंत्रित किया ? अगर भलाई करनी थी तो संसार के उन अभागों में जा पहुँचते, जो पेट की ज्वाला में झुलस रहे हैं। आप यहाँ आए—एक बार नहीं, बार-बार मैंने आपकी मनुष्यता के भरोसे आपको छोड़ दिया था। मुझे आशा थी कि आप कभी-न-कभी होश में आएँगे और अपना रास्ता बदल देंगे। दूसरों के इतिहास में आप व्यर्थ पड़े रहे। अपना इतिहास ही आपके लिए काफ़ी नहीं था क्या ?

राघवशरण

माया !

मायावती

जी !

राघवशरण

तुमने... ?

मायावती

मेरा सब से बड़ा अपकार आपने किया।

राघवशरण

किस तरह जी......

मायावती

मेरे लिए कभी भी दया का भाव आपके मन में नहीं पैदा हुआ। आप सदैव मेरा शिकार करते रहे। आज पूछते हैं किस तरह ? आप उन लोगों में हैं, जो खुल कर तो कभी कुछ कहते नहीं—लेकिन जिन के मौन के भीतर ज्वालामुखी छिपा रहता है। आप से—केवल आपसे बचने के लिए मैं उनको यहाँ लिवा लाई थी। और इस तरह मैं बच गई। नहीं तो यह कुछ न हुआ होता ?

राघवशरण

हूँ—

मायावती

समय है, अभी समय है, निकल भागो। इस प्रलय के भीतर तुम अनीप्सित आ पहुँचे थे। रही उनकी भलाई। इस मिथ्याचार में न पड़े

रहो। तुम जो स्वयं किसी इच्छा, किसी लालसा में, जाल बिछा रहे हो, दूसरे का बंधन नहीं काट सकते। अगर मुझे बदला लेना होता तो मैंने तुम्हारा सारा आदर्श और पाखंड एक ही आघात में चूर-चूर कर दिया होता।

राघवशरण

लेकिन मैं इतना कमज़ोर तो...!

मायावती

ओह! तुम इस युग के, इस लंका के राजा हो... रावण, तुम्हें कमज़ोर नहीं कहती—लेकिन तुम्हारा बल अगर है भी तो कितना पैशाचिक !

राघवशरण

मैं समझता हूँ, तुमसे कहना कुछ...भी व्यर्थ है।

मायावती

बिलकुल व्यर्थ है। इस आशा में, उँह, लेकिन आज तो यह नाटक समाप्त हो रहा है। (इधर-उधर घूमती हुई) देखिए मनुष्य को कभी कभी न अपनी...

राघवशरण

क्या ?

मायावती

अपनी मनुष्यता के साथ...(आकाश की ओर देखने लगती है)।

राघवशरण

हाँ

मायावती

कुछ नहीं, आप जाइए और मनुष्य बनिए। तर्क और विवाद से कभी किसी का भला नहीं हुआ। जिनकी यह सृष्टि है, वे इसके साथ जो चाहें करें, हमारा कोई विरोध नहीं हो सकता।

राघवशरण

तो अब क्या होगा ?

मायावती

(रूखे स्वर में) कैसा ?

राघवशरण

यही कि यह सब ऐसे ही चलेगा या ?

मायावती

[सिर हिलाती हुई] मेरी तो आप से यही प्रार्थना थी कि आप स्वयं बच निकलते। अगर

आप क्षमा करें, आपको विशेष दुःख न हो, तो मैं कहूँ (कुछ सोचती हुई) आप और आप ही की तरह के ऐसे बहुत से लोग हैं जो न तो सुधारक हैं, न उपदेशक और न सेवक। मनुष्यता की जोंकें मनुष्यता के हृदय का रक्त चूस रही हैं। ऐसे ही चले या किसी तरह न चले। संसार का चलाने वाला मनुष्य नहीं ईश्वर है। आप अपने को बचाइए, अपने को। मैं तो यही कहूँगी। रही हम लोगों की चिन्ता, सो, उसे ईश्वर को सौंप दीजिए। जैसा उचित होगा, हम लोग जिसके योग्य होंगे, पा जाएँगे अपने घर में जिन्हें जगह नहीं होती, वे ही दूसरों के प्रबंधक होते हैं।

राघवशरण

(कड़े शब्दों में) माया देवी...

मायावती

(हँसती हुई) जी...

राघवशरण

तुम तो मेरा अपमान...

मायावती

(हँसती हुई) लेकिन बुरा क्या हुआ ?

राघवशरण

कह तो रहा हूँ...मेरा अपमान ..

मायावती

(व्यंग से) मैं भी तो कह रही हूँ, बुराई क्या है। आप किस बात की आशा रखते थे ? आप जो संसार का रहस्य अपनी मुट्ठी में ले कर चलते थे ? ऐसे भ्रम में, इस धोखे में क्यों पड़े ?

राघवशरण

नारी-मोह ! विश्वामित्र का पतन कैसे हुआ ?

मायावती

छीः, पाप करना नहीं, पाप की वकालत करना बुरा है। आप का पाप क्षम्य हो सकता था— लेकिन यह वकालत हुँ...हुँ...धीरे-धीरे आप कितने नीचे पहुँच गए । अपने तईं, अपने तईं देखिए महोदय ! दूसरों के लिए आशा हो सकती है, लेकिन इस लहर के लौट जाने पर आप कहाँ रहेंगे ? है कुछ पता ?

राघवशरण

कहती चलो।

मायावती

बाढ़ आई है, आज नहीं तो कल लौट जाएगी और फिर यहाँ छोड़ जाएगी कीचड़ और दलदल। इसका वह वीभत्स रूप आप क्यों देखेंगे? आपके लिए तो यह सब गुनाह बेलज्ज़त हुआ न?

राघवशरण

कुछ मुझे भी कहने दोगी या नहीं।

मायावती

अवश्य...हाँ कहिए।

राघवशरण

तुमने समझा नहीं। मेरा यहाँ आना और रहना तुम्हारे लिए नहीं, प्रकाश के लिए था...उसके लिए, उसकी रक्षा के लिए।

मायावती

अगर ऐसा होता तो ..लेकिन ऐसा नहीं रहा। इस युग में शपथ का कोई महत्व नहीं है—लेकिन तब भी आपसे, आपके भीतर जो ईश्वर है, उससे

पूछ रही हूँ, ऐसी ही था ? इसका निर्णय अब केवल आप पर, आपकी आत्मा पर है, कहिए तो...

(राघवशरण चुप रहता है) कहिए ?

राघवशरण

ऊँह, छोड़ो यह तर्क (राघवशरण का प्रस्थान । मायावती थोड़ी देर तक वहीं इधर-उधर टहलती रहती है । प्रकाशचंद्र सपना देख रहा है, उसके मुँह से कभी-कभी अस्पष्ट आवाज़ निकलती है । मायावती तेज़ी से कमरे में प्रवेश करती है और प्रकाशचंद्र के समीप बैठ कर कुछ रुक-रुककर ज्यों-ज्यों प्रकाशचंद्र के शब्द निकलते हैं, लिखती है ।)

प्रकाशचंद्र

(स्वप्न की दशा में) नहीं...माया ! छोड़ दो... नहीं छोड़ोगी ? तुम्हारे साथ रहना पाप है । धर्म और संस्कार...के... प्रतिकूल है । मुझे ऐसा अनुभव हो रहा है जैसे तुमने मुझे...तुम्हारे नंदन-वन में इस दिगंतव्यापी लू को छोड़कर मुझे और क्या मिला ? वसंत और कोकिल, फूल और चाँदनी के दर्शन तो कभी न हुए । तुमने...तुमने...क्यों

तुमने मुझे इस तरह...मेरा जीवन नीरस हो गया।
किस लिए, मेरा अपराध क्या था, माया ?

(प्रकाशचंद्र चुप हो जाता है। यों तो उसके मुँह से शब्द कभी-कभी निकल जाते हैं, लेकिन कुछ स्पष्ट सुनाई नहीं पड़ता। माया का लिखना उसी तरह चल रहा है। थोड़ी देर के बाद माया उठती है, झुककर प्रकाशचंद्र के मुँह की ओर देखती है। काग़ज़ मोड़कर चौकी पर रख देती है। दरवाजे के पास जाकर खड़ी होती है। क्षण भर बाद बाहर निकल जाती है। थोड़ी देर तक सन्नाटा रहता है। सामने पेड़ की डालें हिलने लगती हैं और उसी पर पपीहा बोल उठता है—"पी कहाँ, पी, कहाँ।" प्रकाशचंद्र चौंक कर उठ बैठता है। दीपक की लौ तेज़ कर कमरे के बाहर निकल आता है। पपीहा उसी तरह बोलता रहता है। प्रकाशचंद्र तन्मय होकर सुनने लगता है।)

(दूर पर बाँसुरी का स्वर सुन पड़ता है। प्रकाशचंद्र कमरे में प्रवेश कर मसनद के सहारे लेट कर धीरे-धीरे गुन-गुनाने लगता है।)

विश्व की आशाओं में बंद,
आँसुओं का आकुल संसार।

सजाता क्या गति-लय-मृदुछंद,
विश्व-कवि की वीणा के तार !

× × × ×

निराशा में आशा का उदय,
विपुल यह रुदन, रुदन का हर्ष ।
करेगा कब तक नित संचय,
वर्ष के दिवस, दिवस के वर्ष ?

(प्रकाशचंद्र देर तक एक-एक पंक्ति को कई बार दुहरा-दुहरा कर गाता रहता है, पपीहा उसी तरह बोल रहा है। बाँसुरी का स्वर क्रमशः नजदीक होता आ रहा है। हाथ में बाँसुरी लिए राधाचरण का प्रवेश ।)

राधाचरण

(प्रसन्नता के स्वर में) ठीक है । सरस्वती की उपासना का सबसे सुन्दर समय यही है। दो घड़ी रात और है। स्वर्ग का द्वार खुल गया है। संसार का संदेश लेकर तारे एक एक कर भगवान के दरबार में जाने लगे हैं। ऊषा अपने दीप्तिमान स्वर्ण-रथ पर बैठ कर संसार में नवीन जीवन और नवीन प्रेम की विभूति बिखेरती हुई चली जा रही है। साधक तुम्हारी साधना सफल हो।

(प्रकाशचंद्र के पास बैठकर उसके सिर पर हाथ रख देता है। प्रकाशचंद्र का शरीर काँप उठता है।) वाह, तुम्हारा स्वभाव तो जैसे...तुम काँप क्यों उठे ? यही कारण है कि...

प्रकाशचंद्र

(गंभीर होकर) क्या ?

राघवशरण

अभी जो कविता तुम गा रहे थे इसकी कोमलता।

प्रकाशचंद्र

जी...

राधाचरण

केवल दो या तीन पंक्ति सुन सका...उसी से... लेकिन इच्छा हो रही है जैसे और सुनता। (प्रकाशचंद्र की ओर देखता है)

प्रकाशचंद्र

कभी-कभी लिख तो लेता हूँ लेकिन सुनाने में तो मुझे बड़ा असमंजस मालूम होता है। सच कहता हूँ मेरे लिए तो यह बड़ा...

राधाचरण

कहाँ है वह ?

प्रकाशचंद्र

पता नहीं कदाचित् भीतर...

राधाचरण

तुम्हारा चित्त चाहता है उसके साथ...(प्रकाशचंद्र रूखी दृष्टि से उसकी ओर देखता है) देखो मैं उस भाव से नहीं पूछ रहा हूँ, जिस भाव से तुम्हारे मित्र राघवशरण पूछते हैं। मैं तुम्हारी समस्या को तुम्हारी प्रवृत्ति के अनुकूल......(उत्साह के स्वर में) मैं चाहता हूँ, तुम्हें सुखी और प्रसन्न देखना।

प्रकाशचंद्र

लेकिन तो......

राधाचरण

सुनो। मैं चाहता हूँ, हमारा एक परिवार बन जाय। हम सब प्रायः एक ही कोटि के हैं। सामाजिक व्यवस्था और विधान में मेरे लिए, उसके लिए कोई भी जगह नहीं है, और यही बात तुम्हारे लिए भी है। समाज की चहल-पहल, दौड़-धूप में

तुम्हारे लिए भी कहीं जगह नहीं है। जितने बुरे हम लोग हैं (हँसता हुआ) तुम भी प्राय: वही हो—कम से कम समाज की तो ऐसी ही धारणा है। सिवा इसके कि समाज के कुछ इने गिने व्यक्तियों का मनो-रंजन तुम से हो जाय, तुम्हारे जीवन से, तुम्हारे सुख, दुखः से किसे सहानुभूति है। तुम्हारी स्वाभा-विक जगह तो यहाँ है, हम लोगों के साथ, उस परि-वार में जिसके हम सभी सदस्य हों, जिन्होंने अपने जीवन और जगत् के साथ बड़ा से बड़ा प्रयोग किया हो।

प्रकाशचंद्र

(मुसकरा कर) अच्छा तो इस परिवार के सदस्य कौन कौन रहेंगे और उसमें किसको- किसको कौन-कौन-सी जगह मिलेगी।

राधाचरण

(गंभीर मुद्रा में कुछ सोचता हुआ) तुम, वह, मैं और...(वहीं से पेड़ की ओर हाथ उठाकर संकेत करता है) बस यही चार!

प्रकाशचंद्र

और राघवशरण?

राधाचरण

इधर कई दिनों से बराबर दिन और रात अधिक देर तक वे मेरे साथ रहे हैं।

प्रकाशचंद्र

हूँ...।

राधाचरण

उनके यहाँ रहने का विशेष अभीष्ट दिल बहलाव था। उनका स्थान तो समाज के ठीक केंद्र में है। वे जानते सब कुछ हैं, समझते भी सब कुछ हैं और सभी जगह उनकी वही दुनियावी सर-गर्मी रहती है। शायद तुम नहीं जानते वे भी माया को प्रेम करते हैं।

प्रकाशचंद्र

—ऐं......

राधाचरण

डोरी जब टूट जाती है, पतंग को हवा के रुख़ के साथ नीचे गिरना पड़ता है। और यह दोष तो मनुष्य की प्रकृति का है। मनुष्य की संस्कृति और सभ्यता का इतिहास इसी प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का इतिहास है, लेकिन अब तो हवा

उलटी बह पड़ी है। इस युग में तो स्वतंत्रता की नई-नई समस्याएँ मनुष्य के पुराने विश्वासों को हिला-कर उसे औंधे-मुँह प्रकृति की सड़क पर पटक देना चाहती हैं। और इसीलिए मैं तो राघवशरण को दोष नहीं दे सकता, केवल इतना ही कह सकता हूँ कि उन्होंने जो कुछ भी किया केवल पुरुष के रूप में नहीं, जैसा उचित होता—महापुरुष के रूप में किया और यही बुराई हुई। पुरुष अगर सावधान न रह सके, गलती कर बैठे .....(कुछ सोचकर) लेकिन महापुरुष जिसके तर्क और सिद्धांत का जवाब नहीं अगर वह......!

प्रकाशचंद्र

और उन्होंने......

राधाचरण

इसका पता तो शायद तुम्हें अधिक होना चाहिए। लेकिन तुम्हें नहीं है वह साधारण स्त्री नहीं रही। हालांकि अब तक जो कुछ भी हुआ है। उसके प्रतिकूल हुआ है। लेकिन इसमें उसका कोई अपना दोष नहीं था। तुम्हारे साथ विवाह भी उसने

किया था केवल अपनी रक्षा के लिए और इसमें भी संदेह नहीं कि उसकी रक्षा हो गई—औरों से ही नहीं तुमसे भी उसने अपनी रक्षा कर ली और इसी में उसके नारीत्व का चरम विकास और चिरंतन लक्ष्य रहा।

(अकस्मात् पेड़ की डालें हिलने लगती हैं। राधाचरण उठकर तेज़ी से पेड़ के पास पहुँचता है।)

राधाचरण

क्या ? कब ? तो वह डूब गई ? और तुमने उसे नहीं रोका ? उफ़, तुम हँस रहे हो ? तो तुम इसे अपनी वीरता समझ रहे हो ? हूँ...... तो इसमें तुम्हारी कोई प्रेरणा नहीं थी, उसने स्वयं— अच्छा तो तुम्हारे लिए वह सदैव अजेय रही। (उद्वेग के स्वर में) लेकिन तुम बाधा तो डाल सकते थे। उसका संकल्प इतना दृढ़ था ! तुम्हारी इतनी बाधाओं पर भी...वह डूब गई। प्रकाशचंद्र का रूप धरकर तुमने रोका, तब भी—क्या कहा ? अब उस जन्म में। उस जन्म में और इस जन्म का अंत कर इस तरह ? अभागिनी स्त्री !

(राधाचरण वहीं धरती पर बैठ जाता है। थोड़ी देर तक सन्नाटा रहता है। प्रकाशचंद्र दीपक की लौ तेज़कर, चौकी पर झुककर लिखे हुए पन्ने बटोरकर रख रहा है। चौकी पर कोई मुड़ा हुआ क़ागज़ उठाकर खोलता है। झुक-कर पढ़ने लगता है। फिर तेज़ी से उठकर भीतर निकल जाता है।)

राधाचरण

(उठाकर) तब ? ईश्वर का न्याय। ईश्वर का न्याय यह ? अच्छा तो अब तो शायद तुम किसी की जरूरत नहीं समझते। क्या (उद्विग्न होकर) दोनों को व्यवस्था मुझे—हूँ...ऐसा ही विधान है ? हर्गिज़ नहीं, मैं यह नहीं मान सकता। अगर मैं नहीं तो फिर प्रकाश को...मेरा मर्मस्थल तुम्हें मालूम है।

(प्रकाशचंद्र कमरे के बाहर निकल कर दौड़ता हुआ पेड़ तक पहुँच जाता है)

प्रकाशचंद्र

अनर्थ हो गया ?

राधाचरण

हाँ, हो तो गया ?

प्रकाशचंद्र

आप नहीं जानते ?

राधाचरण

जानता हूँ जी, वह डूब मरी यही न ?

प्रकाशचंद्र

(भराई हुई आवाज़ में) तो अब ?

राधाचरण

शांत...और अब हो ही क्या सकता है ? उसके जीवन का जो निर्दिष्ट पथ था, उसकी नियति तो नहीं बदली जा सकी और यह संभव है भी नहीं। लेकिन तुम्हें कैसे मालूम हुआ ?

प्रकाशचंद्र

(हाथ आगे बढ़ाते हुए) यह पत्र रख गई थी।

राधाचरण

(विषाद की हँसी में) इस समय भी उसे पत्र लिखने की सूझी ? प्रकाश......

प्रकाशचंद्र

जी...

राधाचरण

उसने हम लोगों को और भी धनी बना दिया

जी। अब . अब तो उस धन की रक्षा करनी होगी। (उसकी ओर ध्यान से देखकर) बोलो...

प्रकाशचंद्र

तो शायद मैं छूट गया और अब...

राधाचरण

(हँसते हुए) किस तरह जी ?

प्रकाशचंद्र

इस आत्म-हत्या...

राधाचरण

इसीलिए तो नहीं...

प्रकाशचंद्र

तो भला मैं ..

राधाचरण

इसका फल कौन भोगेगा !

प्रकाशचंद्र

लेकिन मैं तो...

राधाचरण

तुम्हारा उससे विवाह जो हुआ था।

(राघवशरण का प्रवेश)

राधाचरण

आइए, महोदय ! आप की प्रेमिका ने आत्म-हत्या कर ली।

राघवशरण

आत्म-हत्या कर ली...किसने किस प्रेमिका ने मेरी...

राधाचरण

माया...माया डूब मरी...

राघवशरण

किस दिन, कब वह मेरी प्रेमिका बनी !

राधाचरण

तो कदाचित् इस विषय में भी आप से तर्क करना पड़ेगा।

राघवशरण—अच्छा तो यह लांछन मैं यों ही मान लूँ ?

राधाचरण

राघव बाबू ! इस संसार में अधिकांश प्रेमी आप ही की तरह हैं, जो साहस के साथ अपना पाप भी नहीं सम्हाल सकते—उसे भी अस्वीकार

कर देते हैं। (राघवशरण प्रकाशचन्द्र, पेड़ और अपनी ओर हाथ उठाकर) जिस स्त्री के जीवन में एक, दो, तीन, चार, इतने प्रेमी हो उठें—सिवा आत्म-हत्या के वह और कर ही क्या सकेगी ? मनुष्यता की यह विडंबना मिटेगी कब ?

(राघवशरण धरती की ओर देखने लगता है)

प्रकाशचन्द्र

(अस्वाभाविक उद्वेग और उत्साह के स्वर में) इसी से तो मनुष्यता मनुष्यता है, नहीं तो फिर उस में रस..... (कुछ रुक कर) वह कितनी नीरस होती ? जहाँ तक मेरी बात मुझे स्वीकार है, मेरा उससे विवाह हुआ था—उसका सुख तो मुझे नहीं मिला। लेकिन उसके दुःख से मैं नहीं भाग सकता। कदाचित् विधाता का यही विधान था।

(प्रकाशचन्द्र आगे-पीछे टहलता रहता है, फिर तेज़ी से आगे बढ़कर कमरे में प्रवेश करता है और चौकी पर से लिखे हुए काग़ज़ उठाकर कमरे के बाहर फेंकने लगता है। फिर दाएँ हाथ से दीपक उठाकर कमरे के बाहर आता है और उन काग़ज़ों को उठा उठाकर जलाने लगता है। राघवचरण दौड़कर उसका हाथ पकड़ लेता है। प्रकाशचन्द्र

उसके मुँह की ओर देखने लगता है। राघवशरण भी तेज़ी से चलकर वहाँ पहुँच जाता है।

राधाचरण

क्या कर रहे हो ?

प्रकाशचन्द्र

(मुसकराकर राघवशरण की ओर संकेत करता है) यह कहा करते थे "तुम्हारी सृष्टि मिथ्या है। तुम अपने मरण और नरक को अमरत्व और स्वर्ग समझते हो।" उनका उद्देश्य चाहे जो रहा हो, लेकिन इतना तो सच है, मैं अनुभव कर रहा हूँ, मैंने जो कुछ भी अब तक लिखा है मिथ्या रहा है, उस मिथ्या को जल जाने दीजिए। उस मिथ्या के सहारे तो मैं अब नहीं खड़ा हो सकता और आपके परिवार में रहना भी मुझे अब स्वीकार है। और राघव बाबू, अब तो मेरे पास कोई मिथ्या नहीं है न ? (राघवशरण की ओर निर्निमेष दृष्टि से देखता है।)

[पर्दा गिरता है]

❀ समाप्त ❀